अगस्त 2003
Rs. 10/-
चन्दामामा

PARLE™

50P only

# पेश हैं पारले स्मूदीज़. रीयल स्मूद कैंडीज़.

पारले की नई कैंडी–स्मूदीज़ के स्मूद स्वाद का मज़ा लीजिए.
ये क्रीमी और 5 ज्यूसी फ़्लैवर में मिलती है. फिर क्यूं न एक रोमांचभरी बाइट का मज़ा लें.

PIRANHA
ACTIVE
CADET HX
YANKEE
ROBO COP
HERO
Heroes start early.
Ride, race, take a tumble or even take a fall.
Because it's never too early to be a hero.
HERO CYCLES

# विशेष आकर्षण

सम्पुट - १०७ अगस्त - २००३ सञ्चिका - ८

दो मोर
१९

संतोष का रहस्य
३१

माया सरोवर - १९
१३

शक्तिशाली राजा और लघु प्राणी
३६

## अन्तरङ्गम्



**SUBSCRIPTION**

**For USA and Canada**
**Single copy $2**
**Annual subscription $20**

***Remittances in favour of Chandmama India Ltd.*** to

Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal, Chennai - 600 097
E-mail : subscription@chandamama.org

**शुल्क**

सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक ९०० रुपये
भारत में बुक पोस्ट द्वारा १२० रुपये
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या
मनी-ऑर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड'
के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागिरेड्डी और चक्रपाणि

# चिरस्थायी शान्ति का रहस्य

शान्ति हमेशा मानवता का सपना रहा है। समय-समय पर राजनेताओं ने इस लक्ष्य के लिए कार्य किया है। पचास वर्ष पूर्व भारत और चीन, एशिया के दो महान देशों ने अच्छे पड़ोसियों की तरह रहने का संकल्प लिया। भारत के प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू के आमंत्रण पर चीन के प्रधान मंत्री चाऊ एन लाई ने सन् १९५४ में भारत का भ्रमण किया। लाखों लोग उसे देखने के लिए उमड़ पड़े। हिन्दी-चीनी भाई-भाई के नारों से बातावरण गूंज उठा।

भारत और चीन ने 'पंचशील' अथवा शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के पाँच सिद्धान्त के नाम से प्रसिद्ध एक दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किये। 'पंचशील' की भावना के अनुसार दोनों देशों को एक दूसरे के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया नहीं अपनाना चाहिए था।

नेहरू ने केवल तीन महीनों के बाद ही चीन का भ्रमण किया। उनका भी उस देश में शानदार स्वागत किया गया। ऐसा लगा कि दोनों देशों की मैत्री, जो दो हजार साल पहले पहली शताब्दी में शुरू हुई थी, जब दो बौद्ध संन्यासी कश्यप मातंग और धर्मरक्षा ने चीन का भ्रमण किया था और उसके बाद अनेक चीनी विद्वान भारत आये थे, को एक बढ़ावा मिला है।

आह! यह कहना मुश्किल है कि कहाँ गलती हुई! चीन ने अचानक सन् १९६२ में भारतीय क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया, किन्तु शीघ्र ही युद्ध विराम की घोषणा कर दी।

चीन और भारत एक बार फिर एक दूसरे के निकट आ रहे हैं। हमारे प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की हाल की चीन यात्रा का भविष्य के लिए बहुत बड़ी आशा के साथ स्वागत किया गया है। हम बड़ी उत्कटता के साथ अभिलाषा करते हैं कि वह आशा फलीभूत हो!

Visit us at : http://www.chandamama.org
सम्पादक : *विश्वम*
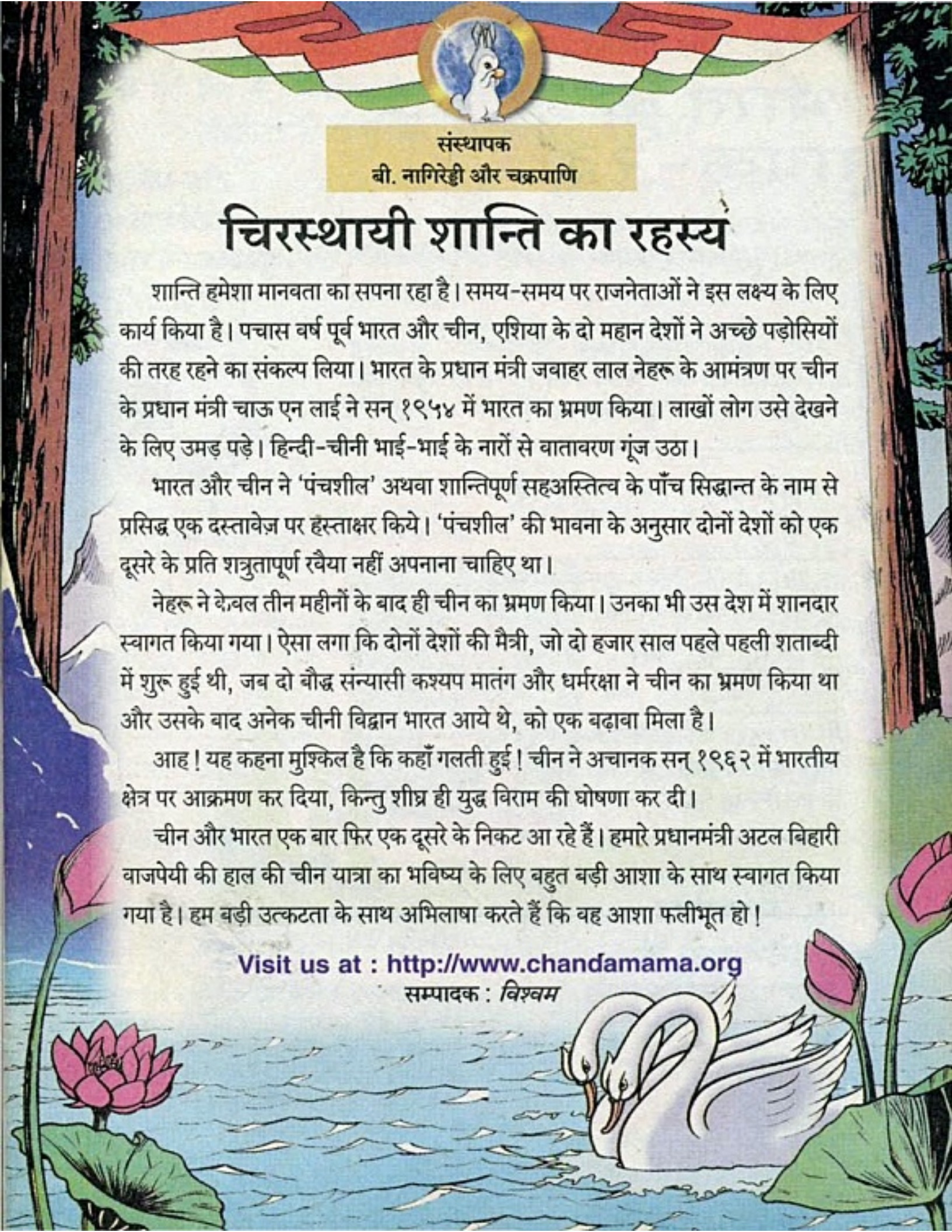
'हीरोज़ ऑफ इंडिया' प्रश्नोत्तरी में अपनी प्रविष्टि भेजें और आश्चर्यजनक पुरस्कार जीतें।

# भारत के नायक-२३

यहाँ राष्ट्रवादी आन्दोलन के कुछ नेताओं की चर्चा है। क्या तुम उन्हें जानते हो?

**तीन सर्वशुद्ध प्रविष्टियों पर पुरस्कार में साइकिलें दी जायेंगी।**

1. मैंने सन् १९२० से १९४७ तक की अवधि में लगभग १० वर्ष जेल में बिताया। मैं भारत का प्रथम प्रधान मंत्री था। मैंने संकेत दे दिया है। नाम बताओ।

---

2. मैंने एक अन्तर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी संस्था - 'अभिनव भारत' की स्थापना की। एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में मैंने मराठी में भारतीय आजादी की पहली लड़ाई का इतिहास लिखा। क्या मेरा नाम जानते हो?

---

3. मैं भारत के लौह पुरुष के रूप में लोकप्रिय हूँ। मैं कौन हूँ?

---

4. सन् १९१२ में लॉर्ड हॉर्डिंग के जुलूस में बम फेंकने के लिए मुझे जिम्मेबार ठहराया गया। भारतीय राष्ट्रीय सेना के साथ मेरा बहुत निकट का संबंध था। क्या मुझे जानते हो?

---

5. मैंने सन् १९३० में बिहार में नमक सत्याग्रह का नेतृत्व किया। मैं भारतीय गणतंत्र का प्रथम राष्ट्रपति भी था। मेरा नाम क्या है?

---

प्रत्येक प्रश्न के नीचे दिये गये स्थान को स्पष्ट अक्षरों में भरें। इन पाँचों में से आपका प्रिय आदर्श नायक कौन है? और क्यों? दस शब्दों में पूरा करें :

मेरा प्रिय नेता ........................................है, क्योंकि

.......................................................................

प्रतियोगी का नाम: ..........................................

उम्र: .............. कक्षा: ..........................................

पूरा पता: .......................................................

.......................................................................

पिन: .............................. फोन: ..............................

प्रतियोगी के हस्ताक्षर: ..........................................

अभिभावक के हस्ताक्षर:...........................................

इस पृष्ठ को काटकर निम्नलिखित पते पर ५ सितम्बर २००३ से पूर्व भेज दें।

हीरोज़ ऑफ इंडिया प्रश्नोत्तरी-२३<br>
चन्दामामा इन्डिया लि.<br>
नं.८२, डिफेंस ऑफिसर्स कॉलोनी<br>
ईक्काडुथांगल, चेन्नई-६०० ०९७.

निर्देश :-

१. यह प्रतियोगिता ८ से १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए है।
२. सभी भाषाओं के संस्करणों से इस प्रतियोगिता के लिए तीन विजेता चुने जायेंगे। विजेताओं को समुचित आकार की साइकिल दी जायेगी। यदि सर्वशुद्ध प्रविष्टियाँ अधिक हुई तो विजेता का चुनाव 'मेरा प्रिय नायक' के सर्वश्रेष्ठ विवरण पर किया जायेगा।
३. निर्णायकों का निर्णय अंतिम होगा।
४. इस संबंध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
५. विजेताओं को डाक द्वारा सूचित किया जायेगा।

पुरस्कार देनेवाले हैं

### जन्म शताब्दी के अवसर पर

# लोकनायक का स्मरण

इस वर्ष भारत में लोकनायक जयप्रकाश नारायण की जन्म शताब्दी मनायी जा रही है।

इनका जन्म बिहार के सितबदियारा नामक गाँव में सन् १९०२ में ११ अक्तूबर को हुआ। जब वे पटना में कॉलेज के छात्र थे, ये स्वतंत्रता आन्दोलन से संबंधित गुप्त सभाओं में जाते थे, जहाँ इन्हें छात्र नेताओं के भाषणों से देश भक्ति की प्रेरणा मिली। इन्होंने कॉलेज की पढ़ाई के बाद उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका जाने का निश्चय किया। अध्ययन के साथ-साथ अर्थोपार्जन के लिए इन्होंने वहाँ अंगूर के बागों, होटलों, कारखानों यहाँ तक कि बूचरखानों में भी मजदूरी की। यहाँ उन्होंने श्रम की महत्ता के साथ-साथ श्रमिक वर्ग के दुख-दर्द को भी अनुभव किया। साथ ही समाज विज्ञान का अध्ययन किया और समाज सेवा के आदर्श के साथ सन् १९२९ में वे भारत लौटे।

भारत लौटकर गाँधीजी के नेतृत्व में वे कांग्रेस में शामिल हो गये। उनके मन में एक ऐसे भारत की कल्पना थी जहाँ जन्म के आधार पर कोई भेद-भाव न हो, जहाँ कोई छोटा-बड़ा न हो और राष्ट्रीय सम्पत्ति पर हरेक का समान अधिकार हो। वे शीघ्र ही राष्ट्रीय स्तर के नेता बन गये और समाजवाद की एक नई विचारधारा के अग्रणी विचारक के रूप में जनता के सामने आये।

भारत को स्वतंत्रता मिल जाने के बाद समाजवादी विचारधारा के नेताओं ने कांग्रेस से हट कर एक अलग दल बनाया, लेकिन १९५२ के प्रथम आम चुनाव में सत्ता में नहीं आ सके। फिर भी नेहरू ने केन्द्रीय सरकार में सम्मिलित होने के लिए जयप्रकाश नारायण को आमंत्रित किया। जयप्रकाश ने सत्ता में आने से इनकार कर दिया। सन् १९५४ में वे विनोबा भावे द्वारा चलाये गये 'सर्वोदय' आन्दोलन में शामिल हो गये और स्वतंत्रता व समानता के सिद्धान्त पर आधारित 'सर्वोदय' आन्दोलन के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया।

देश की दिनोदिन बिगड़ती अवस्था को देखकर जयप्रकाश नारायण ने सन् १९७१ में सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के लिए 'पूर्ण क्रांति' का आह्वान किया। इंदिरा गाँधी की तत्कालीन सरकार ने अपनी सत्ता के लिए संकट समझकर आपत्काल की घोषणा कर दी और इन्हें कैद कर लिया। आपत्काल की समाप्ति के बाद के चुनाव में आई गैर कांग्रेस सरकार द्वारा जयप्रकाश नारायण को सत्ता में आकर देश को मार्गदर्शन देने का आह्वान किया गया। किन्तु जयप्रकाश नारायण ने इस बार भी सत्ता में आने से इनकार कर दिया। उन्हें खुशी थी कि अन्ततः लोकशक्ति की विजय हुई।

देश की समस्त जनता ने इनकी त्याग-भावना को सराहा और उन्हें अपना 'लोकनायक' स्वीकार किया।

जयप्रकाश नारायण ने सन् १९७९ में ८ अक्तूबर को अपना भौतिक चोला छोड़ दिया।

# दान-गुण

राजा नगर में, रामभद्र नामक एक धनाढ्य रहा करता था। भगवान ने उसे धन के साथ-साथ दान देने का गुण भी प्रदान किया। किसी दूसरे का दुख देखकर दया भाव उसमें उमड़ आता था। विपत्तियों में फंसे लोगों की वह खुलकर सहायता करता था। इस कारण उसकी संपत्ति क्रमशः घटती गयी।

उसकी पत्नी चंद्रिका भी अपने पति से कुछ कम न थी। अड़ोस-पड़ोस के लोग उसे सलाह दिया करते थे कि वह अपने पति को इस प्रकार दान-धर्म करने से रोके। उन्होंने यह कहकर भी उसे सावधान किया कि ऐसा दान करते रहने से बच्चों के लिए कुछ भी नहीं बचेगा और उन्हें भविष्य में कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ेगा।

ऐसी बातें सुनकर चंद्रिका हँस पड़ती थी और कहती थी ''बादल भूमि पर ही न बरसकर उन जंगलों में भी बरसते हैं, जहाँ मानव नहीं बसते। वे किसी प्रकार का पक्षपात नहीं दिखाते। यह सृष्टि का धर्म है।

''अगर बादल यह समझ बैठें कि पहाड़ों पर, टीलों पर और जंगलों में हम क्यों बरसें तब लोगों के उपयोग में आनेवाली नदियों का उद्‌गम कैसे होगा? मेरे पति का दान गुण भगवान का दिया हुआ वरदान है। अगर सृष्टिकर्ता ने निर्णय ले लिया हो कि हमारे इस दान-गुण से हमें कष्ट पहुँचे, हम दरिद्र हो जाएँ तो उसके निर्णय के विरुद्ध हम भला क्या कर सकते हैं।''

समय गुज़रता गया। रामभद्र के दोनों बेटे छः और आठ साल की उम्र के हो गये। रामभद्र की संस्कृत भाषा के ज्ञान की प्रशंसा करते हुए लोग थकते नहीं थे।

एक दिन चंद्रिका ने अपने पति रामभद्र से

- समीर गायत्री -

कहा, ''हर माँगनेवाले को आप दान देते रहते हैं। कभी 'न' नहीं कहते। इस पर मैंने भी कभी आपत्ति नहीं जतायी। अब बच्चे बढ़ रहे हैं। उन्हें पढ़ाना-लिखाना, अच्छी तरह से उन्हें शिक्षित करना हमारा कर्तव्य है। मेरी तो इच्छा है कि उन्हें शहर भेजा जाए और वहीं उनकी शिक्षा का प्रबंध किया जाए। मैं नहीं जानती कि इस विषय में आपका क्या अभिप्राय है। सब जानते हैं कि आप संस्कृत के महाविद्वान हैं। आप राजा की पाठशाला में अध्यापक बनिये। भले ही हमारा धन घटता जाए, पर विद्यादान आजीवन हम कर सकते हैं। अपने बच्चों को जायदाद दे न पायें पर आजीविका के लिए आवश्यक विद्या प्रदान करना हमारा कर्तव्य है। इस विषय में आपके क्या विचार है?''

रामभद्र ने, पत्नी की बातों में निहित वास्तविकता को जाना-पहचाना और वह शहर जाने के लिए निकल पड़ा। मार्ग के मध्य में पड़नेवाले इच्छापुर नामक गाँव में वह पहुँचा। उस समय गाँव के बीचोंबीच स्थित शिवालय के ध्वजस्तंभ का पुनः प्रतिष्ठापन हो रहा था। पिछले साल आयी आंधी के कारण वह ध्वजस्तंभ गिर गया था। रामभद्र ने शहर जाने का अपना इरादा बदल दिया और शिवालय के अंदर गया। दानशील व धनाढ्य होने के कारण सबने उसका आदर किया।

शिवालय का धर्मकर्ता ज़मींदार भी वहाँ उपस्थित था। जब उसे मालूम हुआ कि रामभद्र उसी की ज़मींदारी के गाँव का है, तब उसे बेहद खुशी हुई। फिर बातों-बातों में ज़मींदार को मालूम हुआ कि रामभद्र संस्कृत का महापंडित है और शहर की अपनी ही पाठशाला में नौकरी करने जा रहा है तो उसे और खुशी हुई।

ज़मींदार ने, रामभद्र से कहा, ''आपको तुरंत शहर पहुँचने की कोई ज़रूरत नहीं है। अपनी सुविधा के अनुसार नौकरी में लगिये।''

रामभद्र को ज़मींदार की बातों पर खुशी हुई। फिर उसने शिव का अभिषेक व पूजा करवायी। पुजारियों को काफ़ी धन दिया और गाँव लौटकर पत्नी से सारी बातें बतायीं।

पर, रामभद्र को गाँव छोड़कर शहर जाना अच्छा नहीं लग रहा था। वह तो हरेक की इच्छा पूरी करता था, जो भी मदद के लिए हाथ फैलाता

था, भरसक उसकी मदद करता था, पर आज पत्नी की इच्छा को वह ठुकरा नहीं पा रहा था। इसी विषय पर सोचते-सोचते वह व्याकुल हो गया और नदी के किनारे जाकर मन को शांत करने के लिए वह निकल पड़ा।

नदी पर बांध के एक किनारे ग्रामदेवी दुर्गा मंदिर था। दूसरे गाँव से आया एक युवक मंदिर के सामने खड़े होकर प्रार्थना कर रहा था, ''माते, मैं पढ़ा-लिखा हूँ, पर मेरा कोई मूल्य नहीं है। नौकरी की आशा थी, पर जहाँ देखो, होड़ ही होड़ है। मानव का जीवन ही प्रतिस्पर्धा का अखाड़ा बन गया है। कोई रामभद्र है, जो इस गाँव से जाकर राजा की पाठशाला में नौकरी करनेवाला है। मुझपर कृपा करो देवी, उसे शहर जाने से रोको। माँ, उससे मिलकर यह बात कहूँ, मेरे गाँववालों ने मुझे सलाह दी कि उसके पहले मैं तुम्हारी पूजा करूँ।'' यह कहकर उसने देवी को प्रणाम किया। थोड़ी दूर पर खड़े रामभद्र ने उस युवक की बातें सुन लीं। फिर उसके पास आकर उसके बारे में जानकारी प्राप्त की।

उस युवक का नाम था, चरणदास। उसने संस्कृत का अच्छा अध्ययन किया। शहर में राजा की पाठशाला में उसकी नौकरी लगनेवाली थी। पर इतने में उसे मालूम हुआ कि स्वयं ज़मींदार ने रामभद्र को यह नौकरी देने का वचन दिया। इसलिए पाठशाला के प्रधानाध्यापक ने चरणदास को सूचित किया कि उसे यह नौकरी देना संभव नहीं होगा। पर अगर रामभद्र छः

महीनों तक यह कार्य-भार नहीं संभालेगा तो चरणदास को उस स्थान पर नियुक्त करना संभव हो सकता है। पर उसकी यह नियुक्ति अल्पकालीन होगी। प्रधानाध्यापक ने वादा किया कि रामभद्र के नौकरी पर लग जाने पर भी उसे बरक़रार रखने की वे कोशिश करेंगे।

चरणदास का कहा सुनकर रामभद्र का दिल दया से उमड़ पड़ा और उसने चरणदास की सहायता करने का निश्चय किया। वह खुद चरणदास को अपने साथ शहर ले गया, प्रधानाध्यापक से मिला और उनसे कहा कि छः महीनों के बाद नौकरी में भर्ती होना उसके लिए संभव होगा। जो नौकरी उसे मिलनेवाली थी, उसी पर चरणदास की नियुक्ति करवा दी।

घर लौटने के बाद रामभद्र ने सारा वृत्तांत

पत्नी को बताया। चंद्रिका ने अपने दांपत्य-जीवन में पहली बार अपने पति को दोषी ठहराते हुए कहा, ''अपनी शक्ति से बढ़कर दान देना सर्वथा अनुचित है। इन छः महीनों के अंदर कितने ही अप्रत्याशित परिवर्तन हो सकते हैं, घटनाएँ घट सकती हैं। सब के लिए भगवान पर ही विश्वास रखना क्या समुचित है?'' यों उसने अपना दुख व्यक्त किया।

गाँववालों को इस बात का पता लग गया। छः महीनों के बाद रामभद्र के गाँव छोड़कर जाने पर उन्होंने आपत्ति जतायी। उन्होंने रामभद्र पर उसी गाँव में नई पाठशाला चलाने पर दबाव डाला। रामभद्र ने खूब सोचने के बाद अपने ही खेत में एक पाठशाला का निर्माण किया और दो सहायक अध्यापकों को नियुक्त करके पाठशाला शुरू कर दी।

एक महीना पूरा होने के पहले ही ज़मींदार को इस नई पाठशाला के बारे में जानकारी प्राप्त हुई। वह नाराज़ हो उठा और अपने दिवान को बुलाकर कहा, ''हमने सोचा था कि रामभद्र सज्जन है, अच्छा पंडित है, दानी है, इसीलिए हमने अपनी पाठशाला के लिए उसे चुना। उलटे उसने अपनी नई पाठशाला शुरू कर दी। जाइये और पूरा विवरण लाइये।''

दिवान तुरंत राजानगर गया। पहले उसने गाँव के प्रमुखों से पाठशाला के बारे में जानकारी प्राप्त की। यह देखकर उसे बड़ी खुशी हुई कि ज़मींदार के नाम पर ही वह पाठशाला है। लेकिन इसका खर्च रामभद्र अपने खेतों से हानेवाली आमदनी से चला रहा है।

दिवान ने रामभद्र के विद्यादान की भरपूर प्रशंसा की और ज़मींदार से पूरा विषय बताया। ज़मींदार ने खुश होकर कहा, ''हमारी ज़मींदारी में रामभद्र जैसे दानशील का होना हमारे लिए गर्व की बात हैं।'' फिर उसने वहीं उसी क्षण अपने निजी खेतों में से पचास एकड़ की उपजाऊ भूमि रामभद्र से चलायी जा रही पाठशाला के नाम कर दी। इसके अलावा रामभद्र के बेटों के रहने व पढ़ाई का भी इंतज़ाम ज़मींदार ने कर दिया। अब उसके दोनों बेटे शहर में रहकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर पायेंगे।

# माया सरोवर

## 19

*(माया सरोवरेश्वर ने धोखे से जयशील के कंठ में फंदा कस लिया। जयशील ने उसे काटना चाहा। पर माया सरोवरेश्वर मीठी बातें करके काँचनमाला के साथ जयशील को भी माया सरोवर की ओर ले गया। यह ख़बर नर भक्षकों द्वारा सिद्धसाधक को मालूम हुई। बाद...)*

नर भक्षियों ने सारा बृत्तांत सुनाकर विचित्र हाथी पर सवार व्यक्ति के द्वारा बन्दी बनाये हुए व्यक्ति का जब बर्णन किया, तब सिद्धसाधक ने भांप लिया कि वह व्यक्ति और कोई नहीं, बल्कि उसका मित्र जयशील ही होगा। मगर उसे संदेह होने लगा कि उस दुश्मन के साथ रहनेवाली वह युवती कौन हो सकती है?

राजा कनकाक्ष नर भक्षियों की बातें सुन कर विस्मित था। इस पर सिद्धसाधक ने राजा को समझाया-''महाराज! मुझे आज्ञा दीजिए! मेरे मित्र जयशील को माया सरोवर के दुष्ट लोग बन्दी बनाकर ले गये हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसे महान शूर उनके हाथ कैसे बन्दी बन गये हैं? चाहे जो हो, उनकी रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। मैं अभी जा रहा हूँ।''

इन शब्दों के साथ वह नर बानर के कंधों पर सवार होने को हुआ।

राजा कनकाक्ष ने उसे रोकते हुए कहा-

"सिद्धसाधक ! जयशील की रक्षा करने की जिम्मेदारी मेरी भी है। मैं थोड़े सिपाही और घुड़ सवारों को साथ ले तुम्हारे साथ चलता हूँ। मगर हमें शीघ्र माया सरोवर का पता लगाना अत्यंत आवश्यक है। तुम अपने जलवृक भट से क्यों नहीं पूछ लेते?"

सिद्धसाधक ने सर हिलाकर अपनी स्वीकृति दी, तब अपने शूल को जलवृक राक्षस की छाती का निशाना बनाकर पूछा-"अबे जलवृक सेवक! सच बताओ, तुम मेरे विश्वासपात्र सेवक हो या माया सरोवरेश्वर राक्षस का भेदिया बनकर यहाँ आये हो?"

यह सवाल सुनकर जलवृक पत्थर के गदे को सिद्धसाधक के चरणों के आगे रखकर बोला-"मालिक ! सच्चा जलवृक कभी झूठा वचन नहीं देता। मैं आपके वास्ते अपने प्राण तक देने को तैयार स्वामिभक्त सेवक हूँ।"

"अगर यह बात सच है, तब बताओ, माया सरोवर कहाँ है?" सिद्धसाधक ने पूछा।

"मालिक ! एक बार मैंने इसके पहले आपसे निवेदन किया था कि सरोवर का पता बता देने से मेरा सर फट जाएगा। यह मेरी जाति के लिए सरोवर के राजा के साथ हमारे राजा ने यह शाप दिया है।" दीन भाव से जलवृक ने कहा।

"वृकभट ! तुम्हारे प्राणों के लिए कोई ख़तरा नहीं है। मैं महाकाल का भक्त हूँ। अगर किसी कारण से तुम मर भी जाओगे, तो तुम्हें कुछ ही मिनटों में कैलास भेजकर स्वर्ग-सुख दिला दूँगा।" सिद्धसाधक शूल उठाये आसमान की ओर देखकर बोला।

इस पर जलवृक ने कहा, "मैं फिर भी लकड़ी के इशारे से बताने की कोशिश करूँगा।" तब जलवृक एक सूखी लकड़ी से जमीन पर लकीरें खींचते हुए जब-तब चिल्लाने लगा, "ओह ! मेरा सर फटा जा रहा है।"

सिद्धसाधक जलवृक के द्वारा खींची गई रेखाओं को देख पूछ बैठा, "अरे जलवृक ! ये रेखाएँ कैसी? ये टेढी-मेढ़ी लकीरें क्या हैं?"

जलवृक राक्षस सर उठाये बिना आपाद मस्तक काँपकर बोला, "मालिक ! ये तो निकट के पहाड़ हैं और ये हैं जंगल के वृक्ष। उनमें सबसे ऊँचा वृक्ष एक टीले पर है। उस पेड़ पर चढ़कर ऊपरी डाल पर पहुँच करके एक बार पूरब की दिशा में, फिर पश्चिम की ओर देख,

तब उत्तर की दिशा में मुखाबित होने पर माया सरोवर दिखाई देगा।'' यों कहकर उसने अपने दोनों हाथों से सर थाम लिया, तब यह कहते नीचे गिर पड़ा-''मालिक ! मैंने रहस्य बता दिया है। मेरा सर फट जाएगा। ओह, मैं मर गया !''

सिद्धसाधक ने झट से झुककर जलवृक की नाक के पास हाथ ले जाकर जांच की, उसे साँस लेते देख कहा-''महाराज ! अंध विश्वास कैसे ख़तरनाक हो सकते हैं, इसका सबूत यह जलवृक राक्षस है। यह शाप के डर से नीचे गिर गया है, मगर मरा नहीं है।'' ये शब्द कहकर निकट खड़े नर भक्षियों को आदेश दिया-''अबे, तुम लोग तुरंत जाकर चार-पाँच घड़े पानी लेकर आओ !''

नर भक्षी लोग जलवृक राक्षस की ओर देखते मौन खड़े रहे। इस पर सिद्धसाधक ने शूल उठाकर कहा, ''दुष्टो, क्या तुमने मेरी आज्ञा नहीं सुनी?''

नर भक्षियों के नेता का इशारा पाकर उनका पुजारी गणाचारी आगे आया। राजा कनकाक्ष के सामने साष्टांग दण्डवत करके बोला-''आप कृपया भूतों के इस नेता को यहाँ से हटवाकर हमें इस जलवृक राक्षस को दिलाइये। आपका यश गाते हम इसको खा डालेंगे।''

गणाचारी की बात पूरी नहीं हो पाई थी, इस बीच सिद्धसाधक ने उसकी चोटी पकड़कर डाँटा-''अबे नर भक्षी क्रूर प्राणी ! तुम्हें शूल में चुभोकर महाकाल की बलि देने जा रहा हूँ।''

सिद्धसाधक गणाचारी को शूल से चुभोने जा रहा था, तभी दूर से जलाश्व पर वेग के साथ आनेवाला सर्पनख उस दृश्य को देख जोर से चिल्ला पड़ा-''सिद्धसाधक ! जल्दबाजी मत करो। हमें माया सरोवर के जलवृक राक्षसों के साथ लड़ने का वक़्त आ गया है। हमें देखना है कि हमारे इस प्रयत्न में इन नर भक्षियों की सहायता मिल सकती है या नहीं?''

यह पुकार सुनकर सिद्धसाधक ने सर घुमाकर देखा। मौक़ा पाकर गणाचारी दूर भाग गया और अपने दल में जा मिला।

सर्पनख सिद्धसाधक के समीप पहुँचकर घोड़े से उतर पड़ा और जमीन पर मृत हालत में पड़े जलवृक को देख बोला-''सिद्धसाधक, क्या तुमने इसको परलोक भेज दिया है? यह तो हमारा विश्वास पात्र नौकर है न?''

''यह तो विश्वासपात्र नौकर ज़रूर है, मगर

निकट में स्थित राजा कनकाक्ष और उसके सैनिकों को देख उसने कहा-"हंसों के रथ पर उड़ते समय वैद्यदेव ने हमें बताया था, ये तो हिरण्यपुर के राजा कनकाक्ष हैं?"

राजा कनकाक्ष तब तक सर्पनख के विचित्र वेष तथा उसके जलाश्व को देख चकित था। अब उसकी बातें समझ न पाने के कारण उन्होंने पूछा-"वैद्यदेव कौन हैं? क्या मेरे ही राज्य के हैं?"

"महाराज, यह बात मैं नहीं जानता। वे यहीं पर आ रहे हैं।" सर्पनख ने कहा।

"सिद्धसाधक ! क्या तुम उस वैद्यदेव से परिचित हो?" राजा कनकाक्ष ने पूछा। सिद्धसाधक थोड़ी देर सोचता रहा कि यह रहस्य खोला जाये या नहीं, फिर बोला-"महाराज ! उस वैद्यदेव के संबंध में माया सरोवर में परम शत्रु बनकर निवास करनेवाले जलवृक राक्षस तथा माया सरोबरेश्वर के अनुचरों से अज्ञात एक छोटा रहस्य है। वे भी जयशील की भांति अमराबती नगर के निवासी हैं।"

"क्या कहा? जयशील अमरावती नगर का निवासी है? उस देश का राजा रुद्रसेन मेरा जानी दुश्मन है। मुझे भेदियों द्वारा विश्वस्त रूप से मालूम हो गया है कि मुझे कठिनाइयों में फंसे देख वह मेरे राज्य पर हमला करने का प्रयत्न कर रहा है।" राजा कनकाक्ष ने क्रोध में कहा।

"महाराज ! आप जयशील की ईमानदारी

इसे तुम लोगों जैसे अपने राजा पर ही नहीं बल्कि सरोवरेश्वर की शक्ति में भी विश्वास है। किसी शाप की बात याद करते हुए माया सरोवर तक जानेवाले मार्ग की रेखाएँ जमीन पर खींचकर यह नीचे गिर गया है। मगर विश्वास करो, यह मरा नहीं है !" सिद्धसाधक ने उत्तर दिया।

इस बीच राजा कनकाक्ष के थोड़े से सेवकों ने बर्तनों में पानी लाकर जलृक के सिर पर उंडेल दिया। ठण्डे जल का स्पर्श पाकर वह जलवृक राक्षस इधर-उधर लोटता रहा और आँखें खोले बिना चिल्लाने लगा-"मैं कहाँ हूँ? नरक में या माया सरोवर में?"

सिद्धसाधक ने जलवृक की पीठ पर लात मारकर कहा-"अरे जलवृक ! तुम्हें शाप से मुक्ति मिल गई है। मैंने तुम्हें जिलाया है, उठ जाओ।"

ये बातें सुन जलवृक उठ बैठा। सर्पनख ने

पर शंका न कीजिए। चाहे वह किसी भी देश का नागरिक क्यों न हो? युवराजा तथा युवरानी को लाकर आपके हाथ सौंपने का जो वचन दिया है, उसे वे पूरा करने का अवश्य प्रयत्न करेंगे। आपके देश के नागरिक के रूप में मैं आपको वचन देता हूँ।'' सिद्धसाधक ने समझाया।

सिद्धसाधक यों समझा रहा था, तभी थोड़ी दूर पर स्थित नर भक्षियों के दल में कोलाहल शुरू हो गया। वह इसका कारण जानने के ख़्याल से इधर-उधर देख ही रहा था, तभी नर भक्षियों का नेता शेरसिंह और गणाचारी उसके पास दौड़े-दौड़े आये और बोले-''साहब ! आप जैसे चार आदमी दस-बारह जलवृक राक्षसों के साथ लड़ रहे हैं ! क्या हम आपकी मदद करें? हमें भी तो थोड़ा आहार मिल जाएगा।''

इसके दूसरे ही क्षण सर्पनख अपने घोड़े पर उछलकर बैठ गया, तब बोला-''सिद्धसाधक ! वे लोग और कोई नहीं, वैद्यदेव, मेरा छोटा भाई, हंसों के रथ का सारथी राजा का अंगरक्षक है।'' यों कहकर वह उसी वक़्त चल पड़ा।

''जय महाकाल की !'' चिल्लाते सिद्धसाधक नर वानर के कंधों पर उछलकर बैठ गया, तब राजा कनकाक्ष से बोला-''महाराज ! सबसे पहले हमें उन जल राक्षसों से हमारे आदमियों को बचाना है।'' यों कहकर उसने भी सर्पनख का अनुसरण किया।

''हे अरण्यदेव ! आप ही हमारी भूख मिटा

दें।'' यों चिल्लाते नर भक्षियों का दल उनके पीछे दौड़ पड़ा।

सर्पनख और सिद्धसाधक जब वहाँ पहुँचे, तब घोड़े पर सवार हो सर्पस्वर जलवृकों के साथ लड़ते अपनी तलवार से उन्हें काटने जा रहा था। मगर जलवृक उस बार से बचकर वैद्यदेव कहे जानेवाले देवशर्मा, हंसों के रथ के सारथी तथा लंगड़े मंगलवर्मा को भी प्राणों के साथ बन्दी बनाने का प्रयत्न कर रहे थे। मगर देवशर्मा अपनी हीरे जड़ित छड़ी से रोकते हुए उन्हें सावधान कर रहा था-''अरे मूर्खो, सावधान ! इस छड़ी के छोर पर स्थित कांटा ज़हर से बुझा है। तुम्हारे शरीरों को छूते ही मिनटों में मर जाओगे।''

इसी बीच वहाँ पर सिद्धसाधक और सर्पनख भी पहुँचे। दूर से कोलाहल करते नर भक्षी और

राजा कनकाक्ष के सैनिक भी उसी ओर बढ़े आ रहे थे। उन्हें देख जलवृक राक्षस भागने की कोशिश में थे, तब उनका नेता चिल्लाकर आदेश देने लगा-''ठहर जाओ ! हमारे राजा का आदेश है कि अगर हम उन्हें प्राणों के साथ पकड़ न पाये तो मारकर ही लौट जायें।'' यों कहकर पत्थरवाले गदे से देवशर्मा पर वह प्रहार करने को हुआ।

देवशर्मा एक क़दम पीछे हट गया, और बोला-''तुम्हारी मौत निकट आ गई है। मैं उसे कैसे रोक सकता हूँ?'' इन शब्दों के साथ उसके शरीर से देवशर्मा ने अपनी छड़ी छुआ दी। दूसरे ही क्षण राक्षसों का नेता चीख़कर नीचे गिर पड़ा और छटपटाने लगा।

इस पर देवशर्मा अपनी छड़ी ऊपर उठाकर बोला-''अरे बचे हुए जलवृक राक्षसो ! मैं तुम लोगों को आख़िरी बार चेतावनी देता हूँ ! सरोवर में रहनेवाले माया सरोवरेश्वर की पुत्री पद्ममुखी तथा राजकुमार कांचनवर्मा की तुमने कोई हानि करने की कोशिश की तो तुम्हारे राजा के साथ तुम सब के प्राण ले लूँगा। ख़बरदार ! जाकर अपने राजा से कह दो !'' इस पर जलवृक राक्षस हाहाकार मचाते जंगल से होकर भाग खड़े हुए।

तब सर्पनख देवशर्मा के निकट जाकर घोड़े पर से उतर पड़ा, तब बोला-''वैद्यदेव ! माया सरोवर, कांचनमाला, और जयशील जलवृक राक्षसों के द्वारा होनेवाले ख़तरे की बात न जानने के कारण वे लोग सरोवर की ओर जा रहे हैं। क्या उन्हें सावधान नहीं करना है?''

''यह काम तुम दोनों भाइयों तथा हंसों के रथ के सारथी माया सरोवरेश्वर के अंगरक्षक को करना है, जल्दी चले जाओ।'' देवशर्मा ने आदेश दिया।

इस पर सर्पनख और सर्पस्वर जलाश्वों को हांककर तेजी के साथ दौड़ाने लगे। अंगरक्षक निकट के पेड़ों की ओट में जाकर मिनटों में हंसों के रथ को आसमान में उड़ा ले गया। नर भक्षी उत्साह में कोलाहल करते भागनेवाले जलवृक राक्षसों का पीछा करने लगे। *(क्रमशः)*

राजा विक्रम और वेताल की नई कथाएँ

# दो मोर

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया। शव को पेड़ से उतारा। उसे अपने कंधे पर डाल दिया और यथावत् श्मशान की ओर बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के वेताल ने कहा, ''राजन्, देखते नहीं, कितना अंधेरा छाया हुआ है। यह श्मशान भयंकर जंतुओं का निवास-स्थल है। पता नहीं, तुमपर कब क्या गुजरेगा। फिर भी निश्चिंत होकर तुम आगे बढ़े चले जा रहे हो मानों यह सब कुछ तुम्हारे लिए स्वाभाविक हो।

''परंतु जब प्रकृति के वैपरीत्यों तथा वहाँ निवास करनेवाले जीवों के व्यवहार पर अनुमान लगाया जाता है तब पंडितों व अज्ञानियों के विचारों में कितना ही भेद हो जाता है। उदाहरणस्वरूप मैं तुम्हें

चंद्रशर्मा नामक एक चित्रकार की कहानी सुनाने जा रहा हूँ। अपनी थकावट दूर करते हुए ध्यान से सुनो।'' फिर वेताल कहानी यों सुनाने लगा :

महाराज सुवर्णदेव, सुवर्ण देश का शासक था। उसमें भूत दया कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने देश की प्रकृति को बचाने के लिए वह भरसक कोशिश करता था। इसलिए वृक्षों, पशु-पक्षियों आदि की रक्षा के लिए उसने कितने ही प्रबंध किये। वह सबसे कहा करता था कि किसी भी हालत में उन्हें हानि नहीं पहुँचानी चाहिए। वह हर साल दीपावली त्योहार के दिन बैलों की दौड़ की प्रतियोगिता का आयोजन अवश्य करता था। जो बैल उसे सुडौल और सुंदर लगते थे, उन्हें विशेष पुरस्कार भी देता रहता था। उन चित्रकारों का भी सम्मान करता था, जो प्रकृति के सुंदर दृश्यों को मनमोहक ढंग से चित्रित करते थे।

राजधानी के पास ही के एक गाँव में चंद्रशर्मा रहता था। वह एक अच्छा चित्रकार था। अगर कोई अपने रूप का चित्र मांगे तो थोड़ी ही देर में चित्रित करके दे देता था। इसलिए कितने ही धनी उससे अपने चित्र बनवाते थे।

चंद्रशर्मा ने निश्चय कर लिया की दीपावली के दिन राजा चित्रकला में जो प्रतियोगिता चलानेवाले हैं, उसमें मैं अवश्य भाग लूँगा। इसलिए उसने दो फुट लंबे और एक फुट चौड़े काठ की तख्ती पर दो सुंदर मोरों को चित्रित किया, जिन्हें देखने पर ऐसा लगता था, मानों वे अपने पंख फैलाकर एक-दूसरे के सामने नाच रहे हों।

इस चित्र को देखकर एक ने कहा, ''शाबाश! यह कितना अद्भुत चित्र है! ऐसा लगता है, मानों मोर अपने पंख फैलाकर हमारे ही सामने नाच रहे हों। इसे गृह के मुख द्वार पर लटकाया जाए तो घर की शोभा में चार चाँद लग जायेंगे।''

चित्रकला से परिचित एक और व्यक्ति ने कहा, ''तुमने मोर के कंठ के रंगों का बड़ा ही अच्छा मिश्रण किया। कोई भी इन रंगों में ऐसी विविधता नहीं ला सकता। राजा को दिखाओगे तो वे सोने की सौ अशर्फ़ियाँ देंगे।''

चंद्रशर्मा को प्रशंसापूरित ये बातें बहुत अच्छी लगीं। मोर के चित्रों की जो भरपूर प्रशंसा करते थे, उनसे वह पूछता था, ''सचमुच क्या ये इतने सुंदर हैं?''

दीपावली के दिन चंद्रशर्मा अपने एक दोस्त को लेकर प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए बैलगाड़ी में राजधानी गया। प्रतियोगियों के लिए पहले एक योग्यता-स्पर्धा का आयोजन किया गया। उसमें जीतनेवालों को अधिकारी योग्यता-पत्र देते थे। चंद्रशर्मा ने अपना चित्र उन्हें दिखाया। वे उस चित्र को देखकर मंत्रमुग्ध रह गये।

महाराज को भी वह चित्र बहुत अच्छा लगा। उसने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा, ''यह सर्वथा पुरस्कार पाने के योग्य चित्र है।'' आस्थान के पंडितों ने भी उसे बहुत पसन्द किया।

उस समय वहाँ उपस्थित आस्थान के एक पंडित ने कहा, ''प्रभु, यह चित्र निस्संदेह प्रथम पुरस्कार के योग्य है। चित्रकार ने उन वृक्षों का भी सहज चित्रण किया है, जो नाचते हुए मोरों के पीछे हैं। दृश्य नयनाभिराम है।''

उसकी प्रशंसाभरी बातें पूरी हों, इसके पहले ही बैलों की दौड़ में भाग लेने आये एक किसान के साथ का बनवासी ज़ोर से हँस पड़ा। महाराज ने और दूसरों ने भी उसे क्रोध भरी नज़रों से देखा। बनवासी वहाँ से खिसकना ही चाहता था कि महाराज ने उसे रोककर पूछा, ''बताना, यह चित्र देखकर क्यों हँस पड़े?''

बनवासी जवाब देने में सकपका रहा था तो महाराज ने स्वयं कहा, ''डरो मत। हँसी की वजह जानना चाहता हूँ। तुम तो जंगलों में रहते हो, इसलिए पंख फैलाकर नाचनेवाले मोरों के बारे में तुम्हें अच्छी जानकारी होगी।''

चंद्रशर्मा भी बनवासी से यही प्रश्न पूछना चाहता था। राजा ने खुद पूछ लिया, इस पर उसे खुशी हुई। बनवासी ने महाराज और चंद्रशर्मा को सरसरी नज़र से देखा और कहा, ''साहब, इस चित्र में एक बहुत बड़ी ग़लती है।''

''अच्छा! वह क्या ग़लती है, जो हम समझ नहीं पाये और तुम समझ गये?'' महाराज ने पूछा।

''साहब, पुरुष-मोर ही पंख फैलाता है। मोरनी मुर्गी की तरह होती है। उसे आकर्षित करने के लिए ही पुरुष-मोर पंख फैलाकर नाचता है। एक पुरुष-मोर कभी भी किसी दूसरे मोर के सामने पंख नहीं फैलाता। झगड़ा करना हो तभी दूसरे मोर के पास जाता है।''

बनवासी की बातें महाराज को और वहाँ

उपस्थित सब लोगों को आश्चर्यजनक लगीं। आश्चर्य के साथ-साथ वे उसपर क्रोधित भी हुए। पर चंद्रशर्मा ने वनवासी को सिर उठाकर एक बार देखा, फिर सिर झुका लिया और चित्र को दुपट्टे में लपेटकर महाराज को प्रणाम करके वहाँ से चुपचाप चला गया।

बेताल ने पूरी कहानी सुनाने के बाद कहा, ''राजन्, चंद्रशर्मा के चित्र की प्रशंसा महाराज ने और वहाँ उपस्थित सब ने की। इन लोगों में राजकर्मचारी और पंडित भी थे। ऐसी स्थिति में चित्रकला से अपरिचित एक वनवासी का यह कहना कि इस चित्र में गलती है, क्या उसके अज्ञान का परिचायक नहीं? वनवासी की बातों पर बिना क्रोधित हुए चंद्रशर्मा प्रतियोगिता से हट गया और सभा से चला गया। चित्रकार होने के नाते क्या यह उसकी अपरिपक्वता का सूचक नहीं? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने तब कहा, ''वनवासी नागरिकों से दूर शुद्ध प्रकृति में जीवन गुज़ारनेवाला व्यक्ति है। वह वहाँ के पशु-पक्षियों के बारे में बखूबी जानता है। चंद्रशर्मा ने मोरों का जो चित्र बनाया, वह वास्तव में पक्षियों के स्वभाव के बिलकुल विरुद्ध था। इसी कारण उसने, चन्द्रशर्मा के चित्र में ग़लती पायी। यह उसका अज्ञान नहीं, उसकी प्रकृति की परिशीलन शक्ति का अद्भुत उदाहरण है। अब रही, चंद्रशर्मा की बात। हो सकता है, वह चित्रकला में प्रवीण हो, पर उसकी चित्रकला वास्तविकता से कोसों दूर थी। चित्र में चित्रित सुंदर मोरों ने, उनके चित्रण के लिए चन्द्रशर्मा द्वारा उपयोग में लाये गये अद्भुत रंगों के मिश्रण ने महाराज को और दूसरों को मंत्रमुग्ध कर दिया। पर वनवासी की बातों में जो वास्तविकता निहित थी, ईमानदार चंद्रशर्मा समझ गया और उसने महसूस कर लिया कि उसमें प्रकृति की परिशीलनशक्ति का लोप है। इसीलिए वह वहाँ से चुपचाप चला गया।''

राजा के मौन भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

*(आधार - सुचित्रा की रचना)*

# शुभप्रद हार

शंभु प्रसाद कृष्णराजपुर का ज़मींदार था। लोग उसका और उसके परिवार के सदस्यों का आदर करते थे। शंभु प्रसाद की मौत के बाद उसकी पत्नी रत्नावली ज़मींदारी का भार संभालने लगी। उसके चारों बेटे उसके हर आदेश का पालन करते थे और ज़मींदारी के कामों में भरसक सहायता पहुँचाते थे। उन चारों बेटों में कोई मतभेद नहीं होता था। लोग कहते थे कि भाई हों तो ऐसे हों।

परंतु हाँ, यह सच है कि मिले-जुले इस परिवार की बहुओं के बीच कभी-कभार छोटे-मोटे झगड़े हो जाया करते थे, पर तीसरे आदमी को इसकी ख़बर नहीं होती थी। उनकी सास रत्नावली इस विषय में बड़ी सावधानी बरतती थी।

जिस दिन उस घर के नौकर शिव की पत्नी गौरी अपना परिवार बसाने आयी, उसी दिन सबसे छोटे ज़मींदार रामराज के एक पुत्र हुआ। गौरी सुंदर थी और साथ ही होशियार भी। घर का काम-काज भी तेज़ी से करती थी। उसकी यह होशियारी व तेज़ी रत्नावली को बहुत पसंद आयी। दो महीनों के अंदर ही दोनों ने एक-दूसरे को समझ लिया और एक-दूसरे को चाहने लगीं।

रत्नावली को लगने लगा कि गौरी के बिना घर के कामकाज को संभालना मुश्किल है, इसलिए वह यदा-कदा उसे पैसे भी दिया करती थी। उसकी बहुओं को सास का यह काम बिलकुल पसंद नहीं था।

तीन सालों के बाद रामराज के एक पुत्री हुई। तब तक घर के सब लोग उस नन्हें बालक से बहुत ही प्यार करते थे। प्यार से उसे छोटे राजा कहकर पुकारते थे। परंतु बच्ची का जन्म क्या हुआ, सब उसी से प्यार करने लगे, उसी के लिए

- पद्मलता राठौड़ -

लोरियाँ गाने लगे, उसी को गोद में लेने लगे। नन्हें बालक को यह आकस्मिक परिवर्तन देखकर दुख हुआ।

अगर वह अपनी बहन को छू भी लेता तो वे उसे डाँटने लगते। इसलिए वह अक़्सर उसे खरोंचने लगता तो बच्ची ज़ोर-ज़ोर से रोने लगती। दिन ब दिन उसका नटखटपन बढ़ता गया। घर में सबको लगा कि शिशु की रक्षा के लिए अच्छा यही होगा कि कुछ समय के लिए उसे शहर में रहनेवाले मामा के पास भेज दिया जाए।

जैसे ही यह बात बालक को बतायी गयी, उसने माँ से अलग होने से इनकार कर दिया। उसने हठ पकड़ ली कि मैं किसी भी हालत में घर छोड़कर नहीं जाऊँगा। तब गौरी ने प्यार से उसे समझाया और वादा किया कि मैं भी साथ चलूँगी। तब जाकर बालक ने मान लिया। गौरी का घर भी उसी शहर में था। दूसरे ही दिन बालक को गौरी के साथ शहर भेज दिया।

उसी दिन बड़ी बहू चंद्रमती का हार दिखायी नहीं पड़ा। वह हर रौज़ वही हार पहनती थी। उस दिन नहाने के पहले वह हार पूजा गृह में छोड़ गयी थी। परंतु नहा चुकने के बाद पूजा पाठ में व्यस्त होने के कारण उस हार के बारे में वह भूल गयी। दोपहर को भोजन के बाद ही उसे पता चला कि वह हार वहाँ नहीं है, जहाँ उसने रखा था। वह बहुत घबरा गयी। चार पीढ़ियों से वह हार घर की बड़ी बहू पहनती आ रही थी। रत्नावली का दृढ़ विश्वास था कि वह शुभप्रद हार है।

''हाल ही में मुझे मालूम हुआ कि आपके बड़े भाई का सुपुत्र पढ़ाई की आड़ में शहर में रह रहा है और मटरगश्ती कर रहा है। पैसे नहीं होंगे, इसलिए उसी ने हार चुराया होगा।'' दूसरी बहू ने अपने पति से कहा।

''किसे मालूम है कि किस बिल में कौन साँप रहता है। आपके दूसरे भाई की बेटी अच्छी तो लगती है, पर चोरियाँ करने में किसी से कुछ कम नहीं। दो दिन पहले मुझसे बताये बिना ही मेरे कर्णफूल पहनकर स्कूल चली गयी। अच्छा हुआ, मैंने देख लिया और उससे वापस ले लिया। शायद अब उसका मन उस चंद्रहार पर रीझ गया होगा। हो सकता है, उसने उसे खो भी दिया हो।'' तीसरी बहू राजलक्ष्मी अपने पति के कान में बोली।

"सासजी, आप कुछ भी कहिये। नौकरों का इतना भरोसा करना नहीं चाहिए। जहाँ वे हैं, उन्हें वहीं रहने देना चाहिए। नौकरानी गौरी जब देखो, घर में ही घूमती-फिरती रहती है। मुझे तो उस पर संदेह हो रहा है।" चौथी बहू ने संदेह व्यक्त करते हुए कहा।

"छोटे राजा के साथ वह सानंद शहर गयी, इसके पीछे उसकी साजिश है। उस हार को अपनी माँ को सौंपने के लिए ही उसने यह ढोंग रचा है।" बड़ी बहू ने सुर में सुर मिलाया।

पर रत्नावली को गौरी पर रत्ती भर भी संदेह नहीं था। फिर भी चुप ही रह जाना उचित समझा।

दो महीने बीत गये, पर हार के बारे में कुछ भी मालूम नहीं हुआ। गौरी छोटे राजा को लेकर लौटी। उस दिन शामको बड़े बेटे सूर्यनारायण ने नौकर शिव को बुलवाया और उससे कहा, "देखो, मैं तुम्हें घर का नौकर नहीं समझता। अपना भाई समझता हूँ। जो भी हो, तुम्हारी पत्नी गौरी छोटी है, नादान है। तुम ही उससे पूछ लेना कि क्या वह हार उसी ने लिया है?"

शिव ने उसी रात को अपनी पत्नी से पूछा। गौरी जवाब दिये बिना सीधे रत्नावली के पास गयी और बोली, "मालकिन, आप मेरे लिये मेरी नानी जैसी हैं। इसीलिए मैं आपके साथ हिल-मिल गयी। चोरी क्या होती है, मैं जानती ही नहीं। कोई भी क़सम खाने के लिए मैं तैयार हूँ।" वह रोती हुई कहती गयी।

रत्नावली ने गौरी को समझाया-बुझाया और भेज दिया। पर वह उस रास आये हार की चोरी

की बात भुला न सकी। दिन ब दिन उसकी चिंता बढ़ती गयी।

इतने में गर्मी के दिन आ गये। एक दिन शिव ने बड़े बेटे सूर्यनारायण से कहा, ''मालिक, पिछवाड़े का कुआँ एकदम सूख गया है। उसे खुदवाना ज़रूरी है। क्या यह काम करवा दूँ?''

पानी की तंगी थी, इसलिए सूर्यनारायण ने ''हाँ'' कह दिया। खुदवाने का काम शुरू हो गया। चार-पाँच नौकर इस काम में लग गये। घर के सब लोग कुएँ के पास जमा हो गये। नौकर कुएँ में से कीचड़ निकालकर बाहर फेंक रहे थे। कुएँ से थालियाँ, गिलासें एक-एक करके निकलने लगीं।

मिट्टी से लथपथ हाथी का गुड़िया बाहर क्या निकला, दादी की गोद में बैठा छोटा राजा उठ खड़ा हुआ और कहने लगा, ''उस गुड़िये को मैंने ही कुएँ में फेंका था। मेरी गुड़िया मुझे मिल गयी।''

''कहो न मेरे छोटे राजा, और क्या-क्या फेंका तुमने कुएँ में,'' दादी ने प्यार से पूछा।

''यही नहीं, बहुत सारी चीज़ें मैंने कुएँ में फेंकी।'' छोटे राजा ने कहा। और खोदा गया, तो चमकता हुआ चंद्रहार दिखायी पड़ा। सबको यह जानने में देर नहीं लगी कि यह काम छोटे राजा का ही था। क्योंकि मन ही मन उसे इस बात पर नाराज़ी थी कि बहन के जन्म के बाद उससे कोई प्यार नहीं कर रहा है। परंतु उस समय किसी ने भी इस ओर ध्यान नहीं दिया।

दादी ने अपने पोते के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, ''हमारे छोटे राजा के इस काम से तरह-तरह के संदेह पैदा हुए। पर एक बात स्पष्ट हो गई। आगे-पीछे सोचे बिना किसी पर शक करना ग़लत है, क्योंकि किसी पर बिना सबूत के सन्देह करना उसका अपमान करना है। इसीलिए मैं इतने दिनों तक सब कुछ सहती रही। जो भी हो, अब सबके संदेह दूर हो गये। रास आया हमारा हार हमें वापस मिल गया।'' हँसते जा रहे बेटों और बहुओं को तथा वहीं पर चुपचाप खड़े शिव और गौरी को देखते हुए रत्नावली ने कहा।

भारत की पौराणिक कथाएँ - १६

# चौधरी की अहिंसा

उत्सव का अवसर साल में एक ही बार आता था। शिल्पीगण जमीन्दार की बड़ी हवेली के लम्बे-चौड़े कमरे में काली माता की मिट्टी की प्रतिमा बनाते थे। बड़े धूमधाम से उनकी पूजा की जाती थी। ढोल और शहनाई वादन दिनरात चलता रहता था। पुजारी स्तोत्रों का पाठ करते रहते। अनुष्ठान देखने के लिए उस कमरे के सामने सैकड़ों स्त्री-पुरुषों की भीड़ एकत्र हो जाती थी। इसे देखने दूर-दूर से आमंत्रित अतिथि आते और जमीन्दार हार्दिक मुस्कुराहट और आलिंगन के साथ उनका स्वागत करता था।

उत्सव की सबसे भयानक और गमगीन घड़ी तब आती जब देवी के सामने बहुत सारे बकरों की बलि दी जाती। बहुत लोग इस दृश्य को देखना नहीं चाहते थे, इसलिए उठकर चले जाते थे। कुछ डर जाते थे। फिर भी, वे इस घटना से कुछ अनुभव प्राप्त करते थे। कुछ, निस्सन्देह, ऐसे भी थे जिन्हें आनन्द मिलता था।

लेकिन जिस आनन्द के लिए बड़ी उत्सुकता से इन्तजार किया जाता था, उसमें जमीन्दार स्वयं और उनके माननीय अतिथि भाग लेते थे। वे बलि में काटे गये बकरों के मांस बड़ी रुचि के साथ और बड़ी मात्रा में खाते थे।

इस प्रकार हर साल सब कुछ ठीक-ठाक चलता
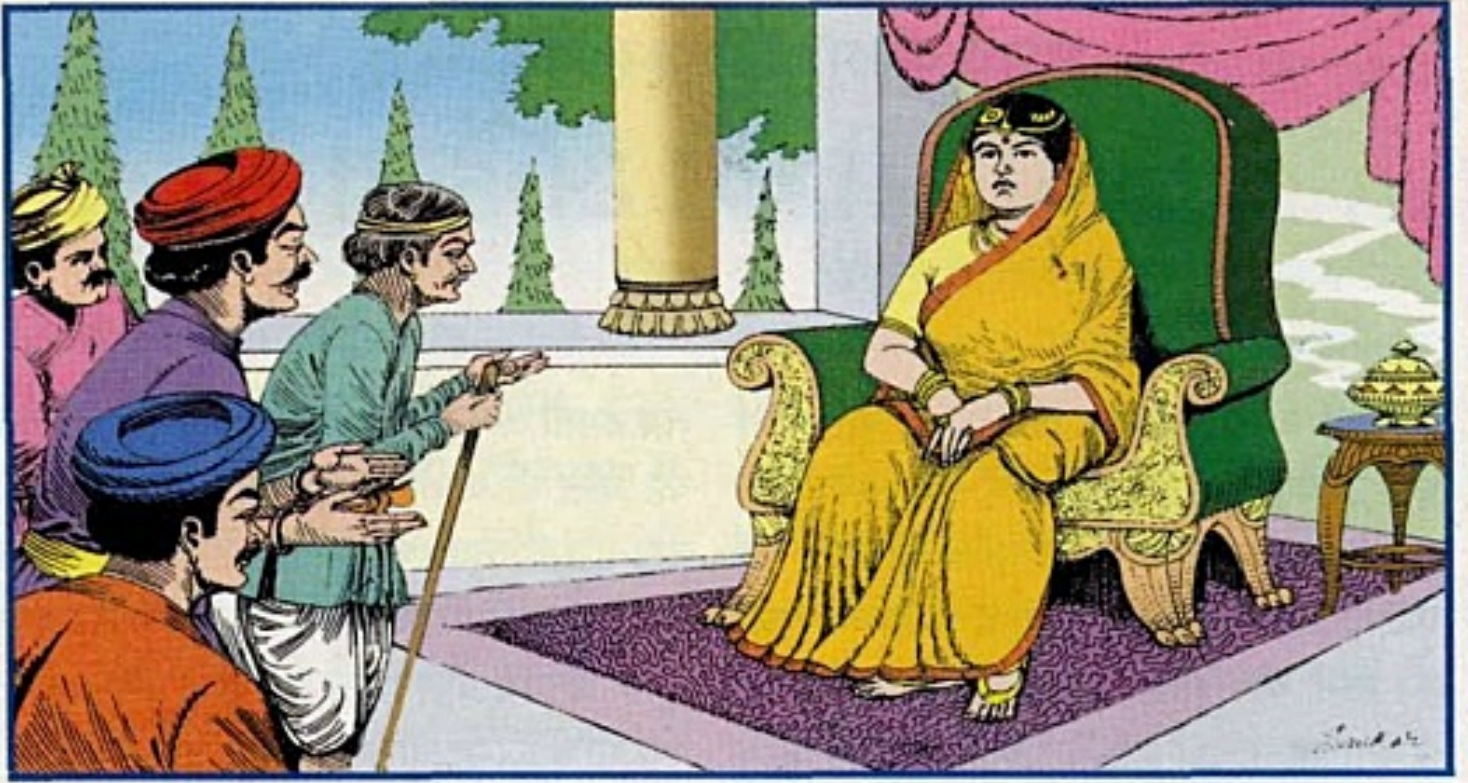
रहा। परन्तु एक दिन जब उत्सव की तैयारियाँ हो रही थीं और जब बकरों की आपूर्ति करनेवाला आदेश लेने आया, जमीन्दार ने अचानक स्पष्ट रूप से कहा, ''अब बकरों की बलि नहीं पड़ेगी, न इस साल और न भविष्य में कभी !''

जमीन्दार के मित्र और कर्मचारी भौचक्के थे। पुरातन परम्परा को मालिक ऐसे एकदम कैसे रोक सकते हैं? वही एक ऐसा मौका था जब वे लोग जी भरकर खा सकते थे ! कितने अफसोस की बात है कि वह अवसर अब कभी नहीं आयेगा !

उनमें से कुछ लोग जमीन्दार की पत्नी से मिले। ''माँ जी, आप दयावती और कर्त्तव्यपरायणा हैं। काली माँ साल में केवल एक बार हमलोगों के बीच उपस्थित होती हैं। क्या हम उन्हें उनके प्रिय भोग से वंचित नहीं कर रहे हैं? वह हमलोगों के बारे में क्या सोचेंगी? जब वह स्वर्ग लौटकर जायेंगी तब वह अन्य देवी-देवताओं से क्या कहेंगी?

''साफ-साफ कहूँ तो मैं देवी के सामने पशु-बलि की परम्परा को पसन्द नहीं करती। यह भक्ति-भाव के वातावरण को नष्ट कर देती है। क्या हम सबको हमारे पति की भक्ति से प्रसन्न नहीं होना चाहिए? मैं समझती हूँ उनका हृदय-परिवर्तन एक शुभ लक्षण है। अब वे रक्तपात नहीं चाहते।'' जमीन्दार की पत्नी चौधरानी ने कहा।

लेकिन जो लोग उसके पास प्रतिनिधित्व करने गये थे, वे बड़े चतुर थे। उन सबने उसे अपने पति से परम्परा को चलाते रहने की अपील करने के लिए राज़ी कर लिया।

शामको जब चौधरी आराम कुर्सी पर आराम कर रहा था और उसका सेवक उसके पाँव दबा रहा था तब चौधरानी ने बगल में खड़ी होकर

जब कोई अपने ऊपर नियंत्रण प्राप्त कर लेता है और सत्य को सिद्ध कर शान्ति उपलब्ध कर लेता है तब उसके सभी सन्देह दूर हो जाते हैं।

*- श्री मद् भागवतम*

संकोच करते हुए कहा, "पूजा पर्व के बारे में कुछ कहना है। जैसा कि आप जानते हैं लोग बकरों की बलि को पूजा उत्सव का एक महत्वपूर्ण अंग मानते हैं। आपके समझदार दोस्तों का कहना है कि काली देवी भी इसे पसन्द करती हैं। इसलिए..."

चौधरी उत्तेजित होकर खड़ा हो गया। "समझदार दोस्त? तुम उन्हें समझदार कहते हो? और तुम भी उन्हीं की तरह निर्दय बन रहे हो!" वह चिल्लाया। उसकी आँखों में आँसू भर आये थे।

चौधरानी चकित रह गई। लेकिन साथ ही इस बात से प्रसन्न भी थी कि उसके पति का अहिंसा के प्रति झुकाव बढ़ रहा है और कि उसने महसूस कर लिया है कि पशु-बलि में क्रूरता है।

"कृपया मुझे गलत न समझिये। मैं निर्दयी नहीं हूँ।"

"नहीं? मेरे प्रति क्रूर नहीं? तुम देख रही होगी कि आजकल मैं केवल मछली खा पाता हूँ, माँस नहीं। पिछले वर्ष तक मेरे आधे दाँत खराब हो चुके थे। किसी तरह बड़ी मुश्किल से उत्सव के समय माँस चबा पाया था। अब तो मेरे सारे दाँत गायब हो चुके हैं। मैं अब मांस बिलकुल नहीं चबा सकता। दूसरे शब्दों में, जब हमारे मेहमान मांस मजे में खायेंगे, मुझे शाकाहारी भोजन पर ही संतोष करना होगा। और तुम चाहती हो कि ऐसा ही हो! यही न! क्या यह मेरे प्रति क्रूरता नहीं है?"

चौधरानी ने अपने पति की अहिंसा का अर्थ समझ लिया। वह चुप हो गई।

## कैसा है रूपवान !

भारतीय मुद्रा रुपया है। क्या जानते हो कैसे इसका यह नाम पड़ा? भारत में मुगल शासन का काल बाबर से लेकर बहादुरशाह जफर तक बादशाहों की एक अटूट शृंखला नहीं थी। पन्द्रह वर्षों तक मुगल गद्दी पर नहीं थे। दिल्ली के सुलतान शेरशाह सूरी ने बादशाह हुमायूँ को भारत से भगा दिया था। सुलतान अपनी विजय के उपलक्ष्य में एक सिक्का चलाना चाहता था। सन् १५४२ में १७८ ग्राम का चाँदी का एक सिक्का ढाला गया एक सिक्का शेरशाह सूरी को दिखाया गया। इसको देखने के बाद उसके मुख से विस्मय के साथ यह उद्‌गार निकल पड़ा - ''रुपैया !'' इस शब्द का अर्थ है सुन्दर, लेकिन यह शब्द सिक्के के साथ चिपक गया।

## झूलती मीनारें

पीसा का झुका हुआ लाट आधुनिक विश्व के आश्चर्यों में से एक है। अहमदाबाद में अहमदशाह द्वारा, जिसके नाम पर शहर जाना जाता है, सन् १४५४ में निर्मित बीवी की मस्जिद में दो मीनारें हैं जिनके कारण गुजरात में शहर को प्रसिद्धि मिली है। वे मीनारें हिलेंगी। किसी को मीनार के सहारे अपने शरीर को टेकना है और उसे धकेलना है। यह हिलेगी ! मीनारें विशाल हैं परन्तु देखने में रमणीय हैं और कोई संकेत नहीं है कि ये क्यों हिलती हैं। अब, इसे भूतकाल में लिखा जाना चाहिए था, क्योंकि मीनारों को सन् २००१ के विध्वंसकारी भूकम्प में क्षति पहुँची थी। सौभाग्यवश वे धराशायी नहीं हुईं और भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग द्वारा उनकी मरम्मत करवाई जा सकती थी।

# संतोष का रहस्य

यमुना नदी के पास के एक गाँव में रहती थी, संपन्न शांता। वह अपने माँ-बाप की इकलौती बेटी थी। उनके मर जाने के बाद उनकी सारी जायदाद उसे मिल गयी। पचास एकड़ उपजाऊ भूमि, दूध देनेवाली बीस गायें, एकड़ भर की ज़मीन में एक बड़ा भवन और पचीस नौकर उसके अधीन हो गये। वह किसी भी विषय में पति की सलाह नहीं लेती थी। सभी मामलों से वह खुद निपटती थी। वह किसी का भी विश्वास नहीं करती थी। इसलिए उसमें क्रमशः अशांति और भय ने घर कर लिया। वह बात-बात पर अनावश्यक चीखने-चिल्लाने लगी।

एक दिन उसके पति बलराम ने उसे समझाते हुए कहा, ''देखो शांता, इतनी संपत्ति है, पर क्या लाभ? सदा अशांत रहती हो। छोटी-छोटी बात पर भी बौखला पड़ती हो। मन प्रशांत न हो तो संपत्ति का होना या न होना बराबर है। ऐसी स्थिति में संपत्ति भी तुम्हारे काम नहीं आयेगी। तुम हमेशा चिंतित रहती हो। यह संभव नहीं है कि हमेशा हमारा हर काम सफल हो; हम सदा विजयी बने रहें। कभी-कभी हम हार जाते हैं तो क्या हुआ! इसे जीवन का एक अनुभव मानकर हमें आगे बढ़ना चाहिए। किसी भी हालत में मन की शांति खोनी नहीं चाहिए। धन से भी अधिक मूल्यवान है, मन की शांति।''

शांता ने पति की बातों पर विशेष ध्यान नहीं दिया। उस दिन दोपहर को जब दोनों खाना खाने बैठे तब सामने की मेज़ पर तीन-चार प्रकार के व्यंजन रखे हुए थे। रोटी और आलू की तरकारी मुँह में रखते ही, उसने थूक दिया और चिल्लाती हुई बोल उठी, ''इस निर्मला को पकाने के लिए सड़ा हुआ आलू ही मिला? काम तो ठीक से करती नहीं और बड़ी-बड़ी बातें करती है।'' यह कह कर वह जाने लगी।

- मुरलीधर -

बलराम ने उसे शांत करते हुए कहा, ''एक नहीं, दो-तीन और तरकारियाँ हैं। दाल भी है। तुम्हारी पसंद की करेले की तरकारी भी है। खाना खा लो। फिर निर्मला की ख़बर लेना।''

पर उसने एक न सुनी और हाथ धोकर वहाँ से चलती बनी। थोड़ी देर बाद बलराम उसके कमरे में गया और समझाते हुए कहने लगा, ''शांता, मैं जो कहने जा रहा हूँ, शांत होकर ध्यान से सुनो। यहाँ से कोस भर की दूरी पर रमणपुर में शिव नामक एक वयोवृद्ध रहते हैं। वे सौ साल से अधिक उम्र के हैं। इसलिए लोग उन्हें शताब्दी शिव कहकर पुकारते हैं। कहा जाता है कि अशांति तथा अनारोग्य की चिकित्सा के लिए वे अचूक परिष्कार मार्ग सुझाते हैं। कल ही हम उनसे मिलने जायेंगे।''

सौभाग्यवश शांता ने पति का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। दूसरे ही दिन पति-पत्नी शिव से मिलने घोड़ा गाड़ी में चले गये। उनके विशाल कमरे में पैर रखते ही शांता ने उन्हें प्रणाम कर अपना परिचय देते हुए कहा, ''मेरा नाम शांता है। मेरी अपार संपत्ति है। अनेक नौकर-चाकर हैं। वे मुझसे अधिक प्रसन्न हैं। मुझे भी ऐसी प्रसन्नता चाहिए।''

वृद्ध शिव ने आँखें बंद करके उसकी बातें ध्यान से सुनीं। फिर आँखें खोलकर मुस्कुराते हुए उन्होंने कहा, ''तुम्हारे अड़ोस-पड़ोस में या कहीं और ऐसी सुहागिन हो, जो सदा प्रसन्न रहती है, उसे अपने साथ ले आना। तब मैं तुम्हें आनंदमय जीवन का रहस्य बताऊँगा।

पति-पत्नी दोनों ने शिव को प्रणाम किया और घर लौटने के लिए निकल पड़े। रास्ते में उन्होंने देखा कि आपस में बातें करती और हँसती हुई दो-तीन औरतें जा रही हैं। शांता ने उन्हें रोका और पूछा, ''तुम लोगों का पेशा क्या है? क्या तुम हमेशा ऐसे ही खुश रहती हो?''

उनमें से एक औरत ने कहा, ''ऐसी कोई बात नहीं। आज हम हाट में हर दिन की तरह तरकारियाँ बेचने गयी थीं। वे जल्दी ही बिक गयीं। इसी बात की हमें बड़ी खुशी है। बारिश आ जाए तो हम घर से निकल नहीं सकतीं। उस दिन तो हमें भूखा ही रहना पड़ता है। ऐसी हालत में हम खुश कैसे रह सकती हैं?''

उनके इस जवाब ने शांता को निराश कर

दिया। फिर बाद घोड़ा गाड़ी एक गली से गुजरने लगी। एक जगह पर भीड़ जमा थी। वे ''माता गायत्री'' कहकर गाते हुए नाच रहे थे।

शांता ने उन आदमियों से पूछा, ''यह माता गायत्री कौन हैं?''

एक भक्त ने कहा, ''गायत्री माता उस आम के बगीचे में एक कुटीर में रहती हैं। वे उत्तम संन्यासिनी हैं। सदा हँसती रहती हैं और भगवान से संबंधित कहानियाँ सुनाती रहती हैं।

शांता और बलराम घोड़ा गाड़ी से उतरे और संन्यासिनी के पास गये। शांता ने उसे प्रणाम करते हुए पूछा, ''माताजी, हमने सुना कि आप नित्य संतुष्ट हैं। आप अवश्य ही सुख-दुख से परे होंगी। राग-विराग से आपको कुछ लेना-देना नहीं होगा। मैंने ठीक कहा न?''

संन्यासिनी ने कहा, ''संन्यासिनी होने के कारण ही मैं पारिवारिक झंझटों से बाहर आ पायी हूँ। नहीं तो पता नहीं, मेरी क्या बुरी हालत होती। फिर भी मैं अपने को नित्य संतुष्ट नहीं मानती।''

उसका जवाब पति-पत्नी को बड़ा ही विचित्र लगा। संन्यासिनी यह भांप गयी और उसने कहा, ''संन्यास स्वीकार करने के बाद मैंने निष्ठा के साथ योग विद्याएँ सीखीं। तद्वारा मुझे मालूम हुआ कि पाँच सालों में मैं मरने जा रही हूँ। मृत्यु के बारे में सोचते ही मैं डरने लगती हूँ। रात को सो भी नहीं पाती'' कहती हुई वह आंसू पोंछने लगी।

पति-पत्नी बिना कुछ बोले वहाँ से खिसक गये। जब वे उस गाँव की गली से गुज़रने लगे, तब उन्होंने देखा कि मंदिर के सामने फूल बेचनेवाली एक औरत गुनगुनाती हुई आराम से बैठी हुई है और लोगों का स्वागत करती हुई कह रही है, ''आइये, आइये, ये ताजा फूल हैं। सुगंध से भरे फूल हैं। सस्ते हैं।''

शांता गाड़ी से उतरी और थोड़ी देर तक उसे ग़ौर से देखती रही। उसने फूलों की एक माला ले ली और पैसे देती हुई बोली, ''तुम एक छोटा-सा व्यापार कर रही हो। पर बहुत ही खुश दिख रही हो। तुम नित्य संतुष्ट हो?''

''हाँ, हाँ, मैं हमेशा खुश रहती हूँ। आखिर मुझे किस बात की कमी है?'' फूलवाली बोली।

उसके जवाब से खुश शांता ने अपने पति को देखा। बलराम ने उस फूलवाली से कहा,

''देखो, तुमसे एक ज़रूरी बात करनी है। तुमने शताब्दी शिव का नाम सुना ही होगा। हम चाहते हैं कि तुम हमारे साथ उनसे मिलने आओ। हम फिर गाड़ी में यहाँ तुम्हें उतार देंगे।''

फूलवाली ने मान लिया, क्योंकि उस दिन का व्यापार भी लगभग ख़त्म हो चुका था। थोड़ी ही देर में तीनों शताब्दी शिव के पास आये। शांता ने फूलवाली के बारे में शिव से बताया।

वृद्ध शिव ने फूलवाली से पूछा, ''क्या तुम नित्य संतुष्ट हो?'' फूलवाली ने ''हाँ'' कहा। ''तुम तो फूल बेचती हो। यह बिलकुल छोटा व्यापार है। इससे तुम कैसे खुश रह सकती हो?''

फूलवाली ने इसके जवाब में कहा, ''व्यापार छोटा है। फिर भी इससे मेरी खुशी में कोई रुकावट नहीं आती। हमारी एक एकड़ उपजाऊ ज़मीन है। मैं अपने पति और बच्चों के साथ एक झोंपडी में रहती हूँ। मेरे पति खेतों में काम करते हैं और थोड़ा-बहुत कमा लेते हैं। खर्च करने में मैं बड़ी सावधानी बरतती हूँ। अपने पति और बच्चों की अच्छी तरह से देखभाल करती हूँ। ज़रूरत पड़ने पर दूसरों की भी सहायता करती हूँ। बहुत कुछ कमाने की या कुछ बन जाने के सपने नहीं देखती। जो है, उसी में संतुष्ट रहती हूँ।''

वृद्ध शिव ने मुस्कुराते हुए शांता को देखा और कहा, ''इस औरत के पास न ही धन है, न ही गहने। परंतु तुम्हारे पास तो अपार संपत्ति पड़ी हुई है और ढेर के ढेर गहने। पर तुममें ऐसी खुशी का अभाव है। जानती हो, इसका क्या कारण है? क्योंकि तुम किसी का विश्वास नहीं करती। सब काम खुद करना चाहती हो और कमाना चाहती हो। इसके लिए अपनी ताक़त से ज्यादा मेहनत करती रहती हो। मानता हूँ कि मनुष्य को संपदाएँ चाहिए। पर समस्त संपदाओं से बढ़कर है, मन की शांति की संपदा। हमारी सोच ही हमारे सुख-दुख का निर्णय करती है। अपने नित्य संतोष के लिए इस फूलवाली ने जो कारण बताया, उसे अच्छी तरह से याद रखो। तुम्हारी समस्या का हल यही है।''

शांता का मन अब शांत हो गया। पति-पत्नी शिव को प्रणाम कर फूलवाली के साथ लौट पड़े।

# समाचार झलक

## घंटी बजी - आओ ! घंटी बजी - जाओ !

विनोद कुमार तिवारी की मुम्बई में पान की एक दुकान है। उसका नामपट इस प्रकार है : ''घण्टावाला पान मंदिर।'' घण्टावाला का अर्थ है - वह जिसके पास घण्टा है। किन्तु हमारे दोस्त के पास एक नहीं बल्कि ३९३ घंटियाँ हैं जो १८ देशों से लाई गई हैं। वे सब दुकान में प्रदर्शित की गई हैं। इतना ही नहीं, जब भी वह ग्राहक के लिए पान लगाता है और उससे पैसे लेता है, वह घंटी बजा देता है। वह अपने दादा द्वारा चलाई गई परम्परा का पालन कर रहा है। उसके दादा ने पुणे में सन् १९३३ में पान की यह दुकान खोली थी। वह दूसरी बार घण्टी तब बजाता है जब वह ग्राहक को विदा करता है। तिवारी के संग्रह में फ्रांस की एक शीशे की घंटी, तिब्बत की एक काष्ठ-घण्टी और भारत की २० किलो पीतल की एक घण्टी है। इस संग्रह ने उसका नाम 'गिनिज़ बुक ऑफ रेकार्ड्स' में दर्ज करा दिया है।

## सबसे कम आयु का ब्लैक बेल्ट बालक

पुणे का ब्रैंडन पॉल फरनैंडिस केवल १२ वर्ष का है। उसे दक्षिण कोरिया में सिओल के टायकवण्डो अकादमी द्वारा टायकवण्डो में चौथा पूम ब्लैक बेल्ट का प्रमाण पत्र प्रदान किया जायेगा। वह ४०० प्रतियोगियों में, जिनमें अधिकांश कोरिया के थे, भारत का एक मात्र प्रतियोगी है। जब वह प्रतियोगिता के लिए, १५ नवम्बर और २ दिसम्बर के बीच सिओल गया, तब वहाँ बर्फ़ पड़ रही थी। यह पुणे के लड़के के लिए एक नया अनुभव था। परिणाम की घोषणा नियमतः अप्रैल में की गई। ब्रैंडन ने प्रशिक्षण का आरम्भ एक वर्ष की छोटी उम्र से कर दिया था।

# उड़ीसा की एक लोक कथा

*पुराने जमाने में आधुनिक उड़ीसा को उत्कल कहा जाता था। इससे पूर्व यह कलिंग के नाम से प्रसिद्ध था जो कभी बड़े-बड़े सम्राटों का साम्राज्य था।*

*एक हजार साल पहले यहाँ के निवासियों ने न केवल हिन्देशिया के द्वीपों तथा मलाया के साथ व्यापार किया बल्कि उस क्षेत्र में अपना राज्य भी स्थापित किया। शैलन्द्रों ने सुमात्रा के साथ नींव के रूप में साम्राज्य की स्थापना की थी जो उड़ीसा के रहनेवाले थे।*

*अंग्रेजों के समय बहुत वर्षों तक उड़ीसा बिहार से मिला हुआ था। सन् १९३६ में यह अलग राज्य बन गया। आज इसकी आबादी लगभग चार करोड़ है और क्षेत्रफल एक लाख पचपन हजार सात सौ सात कि.मी. है। इसके उत्तर में बिहार, उत्तर-पूरब में प.बंगाल, दक्षिण-पूर्व सीमा पर आन्ध्र प्रदेश और पश्चिम में मध्यप्रदेश है। इसका पूर्वी तट बंगाल की खाड़ी से लगता है।*

*इसकी राजधानी भुवनेश्वर एक प्राचीन नगर है जहाँ देश के कुछ सबसे शानदार मंदिर प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।*

## शक्तिशाली राजा और लघु प्राणी

युवा राजा को, जो कलिंग साम्राज्य के एक राज्य का शासक था, अपनी प्रशंसा सुनना अच्छा लगता था। कहने की आवश्यकता नहीं कि ऐसे लोगों की भरमार थी जो अपने मीठे शब्दों से राजा को खुश रखते थे।

एक दिन जब राजा अपने दरबार में आया, एक कवि ने उसके महान गुणों का वर्णन करते हुए एक कविता सुनाई। कविता के अन्तिम बन्द का अर्थ था : ''दुनिया भर में ऐसा कोई नहीं है जो राजा के सामने अपनी किसी चीज पर गर्व

कर सके। कोई कर भी कैसे सकता है? राजा से अधिक कोई सुन्दर नहीं है। राजा से अधिक कोई दानी नहीं है। राजा से अधिक कोई शक्तिशाली या धनी नहीं है!"

यद्यपि यह अतिशयोक्ति के अलावा और कुछ न था, फिर भी दरबारियों ने कवि की बड़ी तारीफ की। कुछ ने तो विस्मय के साथ चिल्लाकर अपना उद्‌गार प्रकट किया, "वाह, वाह! सच कहा, सच कहा!"

लेकिन जैसे ही चिल्लाहट और तालियों की आवाज मन्द पड़ी कि किसी ने जोर से ठहाका लगाया। यह और कोई नहीं बल्कि वृद्ध मंत्री था। "क्या बात है?" अनेक आवाजों ने प्रश्न किया।

"कोई खास नहीं। लेकिन मैं अपनी हँसी नहीं दबा सका, क्योंकि यह किसी के लिए भी असम्भव है, राजा के लिए भी कि वह किसी को किसी भी छोटी चीज पर गर्व करने से रोक दे। एक बन्दर अपनी पूँछ पर गर्व कर सकता है; एक गिद्ध को अपनी चोंच पर घमण्ड हो सकता है; उसे कैसे रोक सकते हो?" मंत्री ने समझाया।

न तो राजा ने और न दरबारियों ने उसे गलत कहा। लेकिन निश्चित रूप से राजा ने उसकी बात का बुरा माना।

एक दिन जब राजा अपने बाग में घूम रहा था तब एक गिलहरी अचानक उसके सामने आई। इसे कहीं एक छोटा-सा सिक्का मिल गया था। वह उसे अपने अगले पावों में पकड़े हुए बोली, " मेरे पास इतना सारा धन!

राजा के पास कितना धन!
वह कितना है उदास-मन
उसके पास है नहीं एक कण"

राजा को क्रोध आ गया। उसने एक कंकड़ उठाया और गिलहरी पर फेंका। वह लघु प्राणी भाग गया लेकिन जल्दी में सिक्का छोड़ गया। राजा उसे उठाकर हँसने लगा।

उन दिनों कलिंग के साधव लोग व्यापार के लिए समुद्री मार्ग से लम्बी यात्रा पर सुवर्ण द्वीप जाया करते थे। युवा राजा बोइत यानी सुमात्रा जानेवाले समुद्री जहाज को विदा देने के लिए महानदी के किनारे गया। राजा ने जहाज के मालिक उदार व्यापारी को सुमात्रा के राजा के लिए उपहार में ताराकसी की एक वस्तु दी। जब वे आपस में बात कर रहे थे तभी अचानक वहाँ

# कला और दस्तकारी

भारत का एक शास्त्रीय नृत्य, ओडीसी, उड़ीसा के मंदिरों से उद्‌भूत हुआ। उड़ीसा अपनी उत्कृष्ट दस्तकारी के लिए प्रसिद्ध है। उनमें सबसे अधिक लोकप्रिय है - ज़रदोज़ी का काम।

सिगार तथा जेवर के बक्से, टोकरियाँ, कलाकृति की वस्तुएँ तथा सुन्दर और जटिल रूपरेखा के साथ चाँदी की सजावटी ट्रे बनाई जाती हैं।

पिपली में बना हुआ गोटा-पट्टा का काम राज्य का दूसरा प्रसिद्ध आकर्षण है। रंगीन कपड़ों को फूलों, चिड़ियों तथा जानवरों के आकार में काट लिया जाता है और एक कपड़े पर कलात्मक ढंग से उनकी सिलाई कर दी जाती है।

डेक पर गिलहरी आ गई और राजा को चिढ़ाती हुई बोली, ''मेरा खजाना लूट कर
राजा करता है यह
सद्‌भावना प्रदर्शन !''

राजा ने अपमानित महसूस किया, लेकिन उसने वहाँ एकत्र उतने लोगों के बीच में अपनी प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की। वह दाँत पीसता रह गया।

गिलहरी ने उस कविता को शामको पुनः दुहराया जब राजा एक विदेशी दूत के पास जा रहा था। राजा बहुत परेशान हो गया। वह रात भर सो न सका। सुबह उसने अपने मंत्री को बताया, ''तुमने कितनी बुद्धिमानी की बात कही थी ! मैं एक गिलहरी को भी मेरे सामने अपना घमण्ड दिखाने में रोक नहीं सकता ! फिर मनुष्यों की तो बात ही क्या है?''

''आप ठीक कहते हैं, प्रभु। हरेक व्यक्ति अपने अहंकार से सोचता है और कार्य करता है। सचमुच वे बड़े भाग्यशाली हैं और जो बहुत कम हैं, जिनके पास यह समझने के लिए काफी सामान्य बुद्धि हो, जो अपने अहं के गुलाम न हों।'' मंत्री ने कहा।

''लेकिन अब मैं क्या करूँ? यह इतना अपमानजनक है; गिलहरी हरेक के सामने मुझे चोर कहती फिरेगी !'' राजा ने बड़ी व्यथा के साथ कहा।

''क्योंकि आपने एक भले इनसान की तरह मुझसे पूछा है, इसलिए मैं सलाह दूँगा कि आप गिलहरी को उसका सिक्का लौटा दीजिए।'' मंत्री ने कहा।

अगली बार गिलहरी जैसे ही राजा के सामने प्रकट हुई, राजा ने उसका सिक्का उसके पास फेंक दिया और वहाँ से चला गया। गिलहरी उसे उठाकर चलती बनी।

राजा ने राहत की सांस ली। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं हुई। दूसरे दिन गिलहरी दरबार में एक खाली आसन पर उछलती हुई आ गई और चीख कर बोली :

''डर गया राजा

वापस कर दी मेरी चीज़

इसके पहले कि कोई उसे हानि पहुँचाये, वह उछलती-कूदती बाग में चली गई।

राजा गंभीर हो गया। उसे विश्वास हो गया कि गिलहरी उन अपमानजनक शब्दों को बार-बार दुहराती रहेगी और वह शांति से नहीं रह पायेगा।

''महाराज,'' दरबार खत्म होने के बाद राजा को अकेले में मंत्री ने कहा, ''उस प्राणी की परवाह न कीजिये, उसे हँसी में उड़ा दीजिये। उसे कहिये कि आप सचमुच उससे डरते हैं - और फिर देखिये, क्या होता है।''

जैसे ही दूसरे दिन गिलहरी दरबार में प्रकट हुई, राजा ने कहा :

ओ गिलहरी शक्तिशाली

करो दया इस राजा पर

जो दीन-हीन है

और तुम हो इतने महान और उदार !

गिलहरी को इसकी आशा न थी। यह एक क्षण के लिए मौन रही। फिर खुशी के मारे नाचने लगी और दौड़कर बाग में भाग गई। और राजा के सामने फिर कभी नहीं आई।

''महाराज, अधिकतर लोग ऐसे ही होते हैं। वे दुनिया की हर चीज का अर्थ अपनी छोटी समझ और बुद्धि के मंद प्रकाश में लगाते हैं। यदि हम शान्त रहकर उसे सहनकर सकें तो हमारी पीड़ा बहुत हद तक कम हो सकती है।'' मंत्री ने राजा से कहा।

''बिलकुल ठीक ! सच ! मैं कितना मूर्ख था कि मैंने सोचा कि कोई भी मेरे सामने किसी चीज़ पर गर्व नहीं कर सकता ! मुझे स्वयं विनम्र होना चाहिए।'' राजा ने अपने भले बृद्ध मंत्री को धन्यवाद देते हुए कहा।

*(उड़ीसा की मौखिक परम्परा के एक बृत्तान्त से मनोज दास द्वारा रूपान्तरित)*

# दो नावों पर सवारी

रविवर्मा भुवनगिरि राज्य के शासक थे। उनके शासन काल में रंगनाथ नामक एक वैद्य रहा करता था। वैद्य वृत्ति के साथ-साथ चित्रलेखन का भी उसे अच्छा ज्ञान था। किसी भी मनुष्य को एक बार देखकर, उसकी रूपरेखाओं का चित्रण हूबहू करने में वह सिद्धहस्त था।

एक दिन आधी रात को दो व्यक्तियों ने उसका दरवाज़ा खटखटाया। रंगनाथ ने दरवाज़ा खोलते हुए पूछा, "कौन हो तुम?"

उनमें से एक ने कहा, "हम पड़ोस के गाँव के हैं। व्यापार के सिलसिले में यहाँ आये। चोरों ने हमारा सब कुछ लूट लिया। हम पैदल ही लौट रहे हैं। अंधेरे में न देख सकने की वजह से इसने कुत्ते की पूंछ पर पांव रख दिया। जिससे उसने पाँव में काट लिया। हमें मालूम हुआ कि आप अच्छे वैद्य हैं, इसीलिए आपके यहाँ चले आये। कृपया इसके घाव पर पट्टी बांध दीजिए।"

रंगनाथ ने देखा कि सचमुच ही दूसरे के घुटने के नीचे रक्त बह रहा है। उसने उस घाव पर कोई तेल मल दिया और पट्टी बांध दी। कृतज्ञता जताकर वे दोनों वहाँ से चले गये।

यह सब करते हुए रंगनाथ उनके चेहरे भी देखता जा रहा था। उसने देखा कि उनके चेहरों पर भय छाया हुआ है और वे बहुत घबराये हुए हैं। उसे संदेह भी हुआ कि कहीं ये चोर तो नहीं हैं। इसलिए जैसे ही वे दोनों चले गये, उसने तुरंत उनके चित्र बना दिये।

दूसरे दिन सैनिकों की घोषणा से उसे मालूम हुआ कि रात को राजा रविवर्मा की हत्या का प्रयत्न हुआ था। आधी रात को दो व्यक्ति चाकू लिये उनके शयनागार में घुस गये थे, पर सैनिकों की चिल्लाहट को सुनकर डर के मारे वे भाग गये। सैनिकों ने उनका पीछा किया पर वे चहारदीवारी फांदकर अंधेरे में भाग गये।

रंगनाथ का अनुमान सही निकला। वह

- परशुराम गुप्ता -

उनके चित्र लेकर नगराधिपति के पास गया और जो भी रात को हुआ, विस्तारपूर्वक उससे बताया। उन चित्रों के आधार पर उन अपराधियों को नगराधिपति ने पकड़ लिया।

राजा ने उन दोनों को फाँसी की सज़ा सुनायी। रंगनाथ का आदर-सत्कार किया और उसे मूल्यवान भेंट भी दी, क्योंकि उसी के चित्रों के आधार पर वे अपराधी पकड़ लिये गये थे।

इस सत्कार से रंगनाथ का नाम उस राज्य भर में प्रसिद्ध हो गया। इसके कारण चित्रकला में उसकी रुचि और बढ़ गई। चित्र बनाने में ही वह अधिक समय बिताने लगा। वैद्य वृत्ति में उसकी अभिरुचि कम होती गयी। कभी-कभी रोग ग्रस्त रोगियों के साथ वह न्याय नहीं कर पाता था। धीरे-धीरे वह लोगों का विश्वास भी खो बैठा। चिकित्सा के लिए उसके पास आनेवालों की संख्या कम होती गयी।

इसी बीच अनावृष्टि के कारण अड़ोस-पड़ोस के राज्यों में अकाल पड़ गया। चूँकि भुवनगिरि राज्य से होती हुई एक नदी बहती थी, इसलिए उस राज्य के लोगों को ऐसी विकट स्थिति का सामना करना नहीं पड़ा। पड़ोसी राज्यों से लोग इस राज्य में आकर बसने लगे।

ऐसे लोगों में विश्वकेतु नामक अधेड़ उम्र का एक वैद्य भी था। इसके पहले वह एक बार रंगनाथ से मिला भी था। वह यह जानता भी था कि रंगनाथ एक अच्छा वैद्य है। लोगों से उसे मालूम हुआ कि अब चित्रकला का

भूत उसके सिर पर सवार है और जब देखो, वह इसी काम में लगा रहता है, इसलिए चिकित्सा के लिए लोगों का उसके पास आना बंद हो गया।

विश्वकेतु ने नगर से बाहर एक बड़ा घर किराये पर ले लिया और वैद्य वृत्ति को निभाने लगा। रंगनाथ से तंग आये लोग अब चिकित्सा के लिए उसके पास आने लगे।

क्रमशः रंगनाथ ने जो भी कमाया, खर्च हो गया। दिन गुज़ारना उसके लिए समस्या बन गयी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि अब क्या किया जाए। इस विषय में सलाह लेने के लिए वह अपने मामा से मिलने निकल पड़ा, जो दूसरे गाँव का निवासी था।

रंगनाथ जब गाँव की सरहद पर पहुँचा तब उसे खपरैल का एक बड़ा और पुराना घर दिखायी पड़ा। उसने विश्वकेतु के बारे में लोगों से सुना था। इसलिए उसे यह ताड़ने में देर नहीं लगी कि यही वैद्य विश्वकेतु का घर है। उस समय विश्वकेतु घर के बरामदे में बैठकर शहनाई बजा रहा था।

रंगनाथ को उसी तरफ़ आता हुआ देखकर विश्वकेतु उठ खड़ा हुआ और आश्चर्य-भरे स्वर में कहा, ''आप और यहाँ!'' उसने रंगनाथ को विनयपूर्वक प्रणाम किया और बैठने के लिए कहा। फिर कहने लगा, ''महाशय, मैं आपको जानता हूँ। मुझे शायद आप जानते नहीं होंगे। मेरा नाम विश्वकेतु है। हमारा राज्य अकाल से पीड़ित है, इसलिए यहाँ आकर बस गया हूँ।''

रंगनाथ ने उसके आदर-सत्कार पर खुश होते हुए कहा, ''आप शहनाई बहुत अच्छा बजाते हैं।''

विश्वकेतु ने मुस्कुराते हुए कहा, ''बचपन से ही मैंने इसका अभ्यास किया, पर पेशे से मैं वैद्य हूँ। मैंने काफी धन भी कमाया। उन दिनों श्रेष्ठ शहनाई वादकों में से मैं भी एक था। मेरी बड़ी प्रसिद्धि हुई। राज पुरस्कार भी मिला। उसी ओर मेरा ध्यान केंद्रित हो गया। वैद्य वृत्ति में मेरी अभिरुचि नहीं रही। क्रमशः लोगों ने चिकित्सा के लिए मेरे पास आना बंद कर दिया। बाद में मालूम हुआ कि शहनाई

वादन से पेट नहीं भरता। पर यह जान पाया, देरी से।''

''ठीक है। तो फिर इसके बाद आपने क्या किया?'' रंगनाथ ने उत्सुकता-भरे स्वर में पूछा।

''जीवन निर्वाह के लिए एक वृत्ति अपनायी तो आत्मतृप्ति के लिए दूसरी एक और। परंतु आत्मतृप्ति को ही सर्वस्व मान बैठा और तक़लीफ़ों में फंस गया। मुझसे यह ग़लती हो गयी। फिर मैं इस राज्य में आ गया, जहाँ मुझे कोई नहीं जानता। उसी वैद्य वृत्ति का विश्वास करके अब जी रहा हूँ। कभी-कभी अपनी आत्मा को संतुष्ट करने के लिए शहनाई बजा लेता हूँ।'' यों विश्वकेतु ने आपबीती सुनायी।

विश्वकेतु की कहानी भी उसी की कहानी जैसी है, इसलिए रंगनाथ थोड़ी देर के लिए ख्यालों में खो गया। फिर अपने को संभालते हुए कहा, ''उम्र में मुझसे छोटे हो, लेकिन जीवन की वास्तविकता को जल्दी ही समझ गये। अपने अनुभव के आधार पर सही रास्ता पकड़ लिया। दो नावों पर पैर रखकर यात्रा करने से ख़तरा ही ख़तरा है। एक तो यात्रा नहीं हो पाती और जान जाने का भी ख़तरा है। मैंने भी ऐसी ही ग़लती की। इसलिए मेरी ऐसी बुरी हालत हुई। मैं भी तुम्हारी ही तरह किसी दूसरे राज्य में जाकर वैद्य वृत्ति में लग जाने की सोच रहा हूँ।''

''पहले से ही आप अच्छे वैद्य माने जाते हैं। यहाँ के लोग अब मुझे भी अच्छा वैद्य मानने लगे हैं। दोनों मिलकर अब यह काम करेंगे तो सोने में सुहागा हो जायेगा। अपने ही गाँव को छोड़कर जाने की ज़रूरत भी नहीं पड़ेगी।'' विश्वकेतु ने कहा।

रंगनाथ को उसकी सलाह उचित लगी। दोनों मिलकर वैद्य वृत्ति ईमानदारी के साथ संभालने लगे। दोनों एकाग्र चित्त से रोगियों के निदान और उनकी चिकित्सा तथा सेवा में अपना सारा समय बिताने लगे। उसी में उन्हें आत्मतृप्ति मिलने लगी। कुछ ही दिनों में वे दोनों लोगों के आदर व विश्वास के पात्र बन गये।

# अपने भारत को जानो

१. मकर संक्रान्ति अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग ढंग से मनाई जाती है। उनकी जोडी बनाओ।

a) पतंग बाजी i) तमिलनाडु
b) चावल पकाना ii) केरल
c) पहाड़ी के मंदिर की तीर्थ यात्रा iii) गुजरात

२. पुराणों के अनुसार एक राजा की अपने राज्य में वापसी को दस दिनों तक मनाया जाता है। वह राजा कौन है?

a) युधिष्ठिर b) रामचन्द्र
c) महाबलि

३. यह एक नेता का चित्र है जिसने सामुदायिक उत्सव बनाने के लिए एक पर्व को एक नया आयाम दिया और इस प्रकार उनमें राष्ट्रीयता की भावना भर दी। वह नेता कौन था और पर्व कौन-सा है?

४. लोग निश्चित रूप से आनन्द के भाव में हैं। लेकिन इस चित्र में कुछ विसंगति है। वह क्या है?

५. पैगम्बर मुहम्मद के बेटे हुसैन की शहादत मुसलमानों द्वारा मनाई जाती है। उस दिन को क्या कहते हैं?

a) रमजान b) इदुलजोहा
c) इदुल फ़ित्र

*(उत्तर अगले महीने)*

## जुलाई प्रश्नोत्तरी के उत्तर

१. बृहस्पति
२. आर्य भट्ट
३. कृषि
४. मदन मोहन मालवीय - बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी
५. रूड़की विश्वविद्यालय
६. डॉ. एल.के. अनन्तकृष्ण अय्यर

# विघ्नेश्वर

गजानन पंडित के घर में कामधेनु जैसी एक अच्छी दुधारू गाय थी। नंद नामक युवक उसे चारा-पानी देता और गजानन पंडित को रोज दुहकर गाढ़ा दूध पिलाया करता था। कुछ दिन बाद स्वर केसरी ने नंद को फुसला कर अपने वश में करके उसे अपनी योजना बताई।

गणपति-नवरात्रि के उत्सवों के संदर्भ में गजानन की पत्नी अपनी बेटी, दामाद और नाती गणेशभट्ट को लिवा लाने समीप के कल्याणीनगर गई; लेकिन किसी वजह से देरी हो गई।

गजानन के मधुर संगीत को सुनने के लिए दूर-दूर के गाँवों से श्रोता बातापि नगर पहुँचने लगे। उसी दिन उत्सव का प्रारंभ होनेवाला था। बातापि नगर के मंदिर के अहाते में गजानन का गीत सुनाने का पहला दिन था। उस दिन नंद ने बड़े सवेरे उठ कर स्वर केसरी के कहे मुताबिक़ लोटे में भरे पानी में उसी वक़्त दुहकर लाया गया दूध डाल दिया और सीधे लोटा ले जाकर गजानन के हाथ दे दिया।

गजानन मिलावटवाले दूध को देख चकित रह गया और पूछा, ''नंद, यह कैसी बात है? आज तुम पहली बार दूध में पानी मिलाकर लाये हो?'' इस पर नंद ने झट जवाब दिया, ''मैं गणेशजी की शपथ खाकर कहता हूँ कि मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया है।''

गजानन के सामने हमेशा विनयपूर्वक व्यवहार करनेवाला नंद आज निडर होकर चिल्ला रहा था; उसके इस व्यवहार पर चकित हो रास्ते से आने-जाने लोग जमा हो गये। उस गली में किसी काम से गुजरनेवाले जैसे अभिनय करता हुआ स्वर

केसरी रुक गया और मन ही मन मुस्कुराता उस दृश्य को देखता रहा।

पंडित गजानन ख़ीझकर बोला, ''अरे नंद, तुम शपथ करने पर तुल गये? शपथ करो, देखें।''

गजानन की यह डांट सुनकर नंद और घबरा गया। दूर पर खड़े हुए तमाशा देखनेवाला स्वर केसरी बड़े बुजुर्ग की तरह नजदीक़ आया, और बोला, ''अरे, बात कहने से हो गया? शपथ कर लो न ! तुमने जो कहा, उसे फिर से ठीक से कहो और दिया बुझाओ ! डरते क्यों हो?'' यों उसे ढाढ़स बंधाते हुए स्वर केसरी ने उसकी ओर आँख का इशारा किया।

नंद की हिम्मत बंध गई। वह सामनेवाले कमरे में गणेश की प्रतिमा के सामने पहुँचा और जलते दीपक के सामने खड़े हो डरते-डरते मंद स्वर में बोला, ''यदि मैंने दूध में पानी मिला दिया हो, तो मेरे दोनों हाथ सुन्न हो जायें, वरना मुझपर संदेह करनेवाला स्वर मूक हो जाये।'' यों कहकर नंद ने दीपक बुझाया और आँखें बंद कर लीं।

इस पर गजानन का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसका कंठ मूक हो गया।

वहाँ पर इकट्ठे हुए लोग ये शब्द कहते अपनी सहानुभूति जताने लगे, ''उफ़, यह क्या हो गया?'' तभी स्वर केसरी बोल उठा, ''शपथ कराना हँसी-मजाक़ थोड़े ही है?'' स्वर केसरी की कंठध्वनि सुनकर नंद ने आँखें खोलीं। अपने हाथों को टटोल कर देखा और उनको सही हालत में देख ख़ुश होता हुआ जल्दी-जल्दी वह स्वर केसरी के पास जा खड़ा हुआ।

उसी वक़्त बाल गणेशभट्ट दौड़ता आ पहुँचा और बोला, ''नानाजी, गाड़ी से उतरकर मैं दौड़ता हुआ आया। नानीजी वग़ैरह गाड़ी में आ रहे हैं।'' यों कहते अपने नाना की हालत देख वह विस्मय में आ गया। वहाँ पर इकट्ठे लोगों के मुँह से सारा हाल जानकर कमर पर हाथ रखे ठाट से खड़े हो चिल्ला उठा, ''नंद, रुक जाओ।''

स्वर केसरी के साथ लौटनेवाला नंद अचानक रुक गया, पर वह कमरे में दीप को जलते देख चकित रह गया।

''ऐसा मालूम होता है कि तुमने ठीक से दीपक नहीं बुझाया। हम भी तो देखें, फिर से शपथ कर लो।'' आदेश देनेवाले स्वर में बाल गणेश भट्ट ने कहा।

स्वर केसरी ने नंद की पीठ पर धीरे से धक्का

देकर इस तरह उसे ढकेला, जिसका मतलब था कि ''नंद, डरो मत। जाकर शपथ खा लो।''

बाल गणेश भट्ट ने कठोर स्वर में कहा, ''नंद, ठीक से सुन लो। तुम यह शपथ लेकर दीपक बुझाओ कि मैंने अगर पानी में दूध मिलाकर दिया हो, तो मेरे हाथ गिर जायें।''

ये शब्द सुनते ही नंद के बदन से पसीना छूटने लगा। वह थर-थर काँपता हुए बोला, ''बाप रे बाप, मैं ऐसी शपथ न लूँगा। स्वर केसरी के कहे मुताबिक़ मैं पानी में दूध डालकर ले आया। मैंने यह शपथ खाई ज़रूर कि मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया है। बस, मुझे बचाइये।'' यों कहते नंद ने पानी में दूध डाला, तब लोटे में गाढ़ा दूध लाकर बाल गणेश भट्ट के आगे रख दिया, और इस तरह उसके आगे गिर पड़ा, मानो घुटने टेक रहा हो। वहाँ पर एकत्रित लोग कह-कहे लगाकर हँसने लगे, इस पर स्वर केसरी वहाँ से चुपके से खिसक गया। कुछ लोग उसका पीछा करने लगे।

गणेश भट्ट ने लोगों की ओर मुड़कर कहा, ''आप लोग देख रहे हैं न? ये शपथ खानेवाले और इनके पीछे रहकर शपथ करानेवाले ज़्यादातर भोले होते हैं। साथ ही कुछ लोग बात बदल कर सत्य को उलटनेवाले द्रोही होते हैं। ये लोग भोले लोगों को दगा देनेवाले चंट हैं।''

''हाँ, हाँ, तुम तो बालक हो; फिर भी तुमने खूब कहा। तुमने सबकी आँखें खुलवा दीं।'' यों उस बालक भी तारीफ़ करने लगे। उसी वक़्त, गजानन पंडित को बोलते देख सब लोग प्रसन्न हो वहाँ से चल गये। गणेश भट्ट अपने नाना के समीप जाकर बोला, ''नानाजी, आप तो एक दम सीधे-सादे और बिना घमण्डवाले पंडित होकर इस तरह की शपथ के मायाजाल में फँस गये हैं ! यह तो बड़ी अचरज की बात मालूम होती है।''
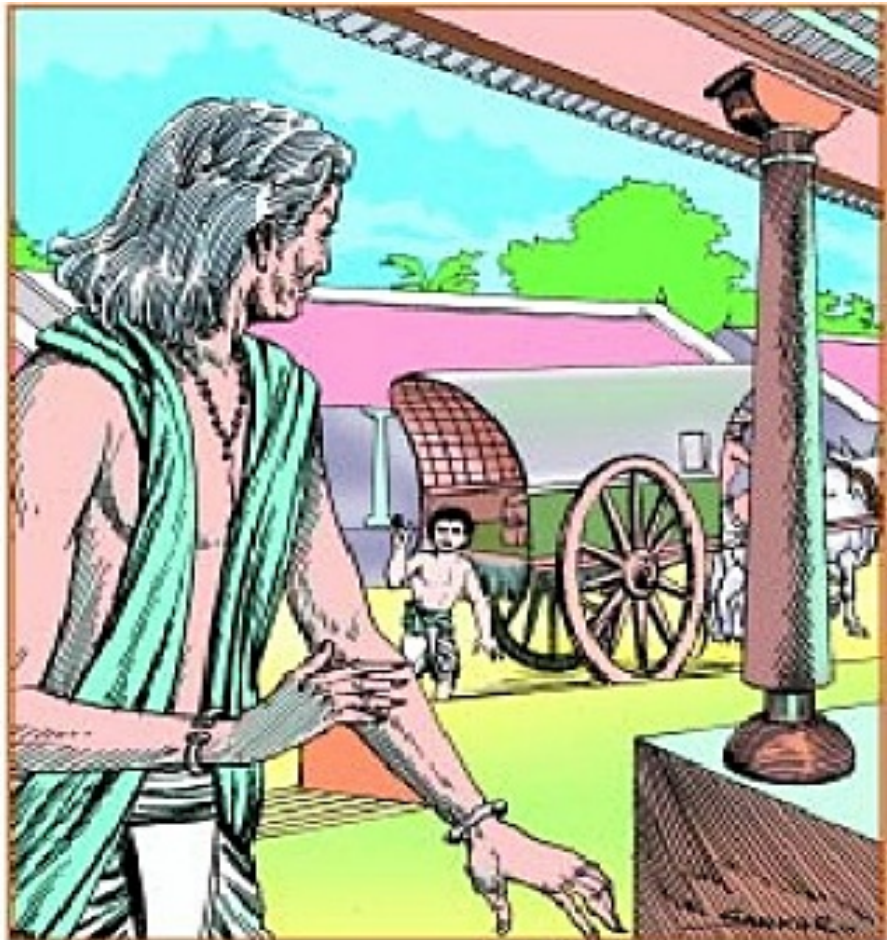
गजानन ने बालक को अपनी गोद में लिया, आँखें बंद करके बोला, ''हाँ, गणेश, तुम ठीक कहते हो।'' तभी एक गाड़ी घर के सामने रुकी।

गजानन ने आँखें खोलकर देखा, बालक वहाँ पर न था। उसी वक़्त गाड़ी पर से गणेश भट्ट को नीचे कूदते गजानन ने देखा। उसका चेहरा एक ज्योति की भांति चमक उठा। वह ''गणेश, गणेश !'' पुकारते बड़ी ख़ुशी के साथ आनंद भैरवी का राग अलापने लगा। पावन मिश्र ने कहानी सुनाना बंदकर पूछा, ''बच्चो, तुम लोग बताओ,

पहले जो गणेश भट्ट आया था, वह कौन था?''

बच्चे, बड़े, सभी लोग उत्साह में आकर एक स्वर में बोल उठे, ''और कौन हैं? हमारे विघ्नेश्वर ही। वातापि गणपति ही थे।''

पावन मिश्र ने कहानी सुनाना फिर शुरू किया : ''नानाजी !'' कहते गणेश भट्ट हाथ फैलाकर गजानन पंडित की ओर दौड़ता आ रहा था। पंडित ने अपने हाथ फैलाकर ''गणेश !'' पुकारते उसे ऊपर उठाया, बोला, ''गणेश ! हम पर विघ्नेश्वर का अनुग्रह हुआ है। तुम्हारे रूप में आकर उन्होंने हमारे घर को पावन किया है। यह घर तो गजानन का मंदिर है।'' यों कहकर साठ साल का वह पंडित उत्साह में आकर बच्चे की तरह नाचते हुए आनंद भैरवी राग में गाने लगा, ''तांडव नृत्य करी गजानन, धिमिकिट।'' यह गीत घंटे की ध्वनि की भांति गूंज उठा।

उस आनंद की चरम सीमा में स्वर केसरी दौड़ा-दौड़ा आ पहुँचा और गजानन पंडित के पैरों से लिपट कर सर टिकाये बोला, ''गुरुदेव, मैं तब तक आपके पैर न छोड़ूँगा जब तक आप मुझे क्षमा न करेंगे।''

गजानन होश में आया, स्वर केसरी को हाथ पकड़कर ऊपर उठाया, फिर बोला, ''स्वर केसरी, हम लोग सिर्फ़ निमित्त मात्र हैं। यह सब उस गजानन की लीला है। तुमने शास्त्र-बिधि से संगीत का मंथन किया है। मैंने भक्ति और ममता को महत्व दिया। मेरा विश्वास है कि भक्ति से जुड़ने पर ही संगीत उत्तम श्रेणी को प्राप्त होता है। बस ! आज से स्वर्ण गणेश की सारी प्रतिमाएँ तुम्हारे अधीन होंगी। मैं ये सब सत्कार और सम्मान नहीं चाहता और आइंदा मैं किसी सभा-समारोह में अपना संगीत नहीं सुनाऊँगा।''

यह जवाब सुनकर बालक गणेश भट्ट बोला, ''नानाजी, आप सिर्फ़ अपने आत्म-संतोष के लिए घर के अन्दर गाते रहेंगे तो क्या होगा? लोगों के दिलों में अच्छी अभिरुचि, आनंद, ममता और भक्ति पैदा करने पर ही आपका पांडित्य सार्थक होगा।''

इस पर गजानन हाथ जोड़ कर बोला, ''हे विघ्नेश्वर ! ये शब्द आप ख़ुद मेरे नाती के मुँह से कह रहे हैं ! आज तक मैंने आपके कहे अनुसार संगीत सुनाया है। आइंदा मैं आपके आदेशानुसार आपका यशोगान करूँगा ! आप श्रोताओं के हृदयों में नर्तन कीजिए। पर इस

बात का आप ध्यान रखें कि मुझे आइंदा सत्कार व सम्मान प्राप्त न हो।''

गजानन पंडित अब साठ साल के हो चुके थे, इस पर उनके मना करते रहने पर भी उस दिन शामको वातापि गणपति के मंदिरके अहाते में एक भारी सभा का इंतज़ाम हुआ। फूलों की वर्षा के बीच गजानन पंडित की षष्ठि पूर्ति का उत्सव बड़े ही ठाट से मनाया गया। गजानन पंडित ने हाथ जोड़कर कहा, ''कई महानुभावों ने संगीत और कविता को भक्ति के वास्ते समर्पित किया, उसी को उत्तम मार्ग बताया। मैंने उसी मार्ग पर विश्वास किया। उन सब महात्माओं के प्रति मैं अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ। इसके अतिरिक्त मेरे अन्दर कोई विशेषता नहीं है।''

इन शब्दों के साथ गजानन ने अनेक राग मालिकाओं के साथ विघ्नेश्वर की स्तुति करते अपना अमृतमय संगीत सुनाया। उस दिन श्रोताओं के हृदयों में जो विघ्नेश्वर प्रवेश कर गये, वे सदा के लिए नर्तन करते रह गये।

''वातापि नगर के इतिहास में गजानन पंडित का नाम स्वर्ण अक्षरों में सदा के लिए अंकित होकर रह गया।'' इन शब्दों के साथ पावन मिश्र ने अपनी कहानी समाप्त की।

एक दिन बहुत से बच्चे और उनके पीछे खड़े होकर बड़े लोग भी एक चित्र की ओर विचित्र ढंग से देख रहे थे। उस चित्र में एक अनोखा भूत जंतु चित्रित था। उसी समय पावन मिश्र मण्डप में प्रवेश कर रहा था। उसने बच्चों के

कुतूहल का कारण जानकर कहा, ''बच्चो, मैं तुम लोगों को इस चित्र की कहानी सुनाता हूँ। तुम सब लोग बैठ जाओ।''

इसके बाद कहानी शुरू कर दी :

''इंद्र ने सगर चक्रवर्ती के यज्ञ के घोड़े को छिपाया। उस चक्रवर्ती के यज्ञ को पूरा होने से रोकने के लिए वे घोड़े को चुरा ले गये और रास्ते में अनेक दुष्ट कार्य और अत्याचार किये।

सगर चक्रवर्ती के वंशज अभिनंदन ने इंद्र को हिस्सा दिये बिना एक महा यज्ञ शुरू किया। इस पर वे क्रोध में आ गये और यम को सुख भोगों के द्वारा तृप्त करके अभिनंदन के यज्ञ को ध्वंस करने भेजा।

काल यम काल के अधिपति हैं। प्राणियों के जीवन और मरण के वे ही कारणभूत हैं। काल को काल यम और काल धर्म भी पुकारते हैं।

काल यम यज्ञ पुरुष के अंदर प्रवेश कर गये और अभिनंदन के यज्ञ की अग्नि में से एक पहाड़ के बराबर भयंकर जंतुभूत को पैदा किया। उसे देख डर के मारे ऋत्विज और अध्वर्यु तितर-बितर हो भाग गये। इस तरह यज्ञ वाटिका ध्वस्त हो गई। राजा अभिनंदन गणेशजी के भक्त थे। उनके गुरु वसिष्ठ ने कहा, ''महाराज, इस तरह का विघ्न पैदा हो सकता है, यह सोचकर मैंने होम कुंड के सामने बहुत बड़ा स्वस्तिकवाला आसन लगवाया। स्वस्तिक तो गणेशजी का संकेत चिह्न है। आप गणेशजी की प्रतिमा के रूप में हल्दी का ढेला स्वस्तिक केन्द्र में रखकर उसे प्रणाम कीजिए। वह स्वस्तिक विघ्न का निर्मूल करेगा।''

राजा ने ऐसा ही किया। उस स्वस्तिक रंगोली के केन्द्र से एक अद्‌भुत प्रकंपन के साथ कोई नाद निकल पड़ा। उसके भीतर से असंख्य अणु ऊपर उठे और उस महान जंतुभूत को घेर लिया। वे अणु बढ़ते-बढ़ते चूहों के रूप में बदल गये। कई रंगों में चमकनेवाले चूहे उस जंतु भूत को घेर कर काटने लगे। आख़िर उस भूत के सारे बदन में घाव हो गये। वह भूत थोड़ी देर तक मृत जानवर के जैसे छटपटाता रहा और मरने का दृश्य पैदाकर गायब हो गया।

# दो वरदान



बहुत पहले सत्यकीर्ति नामक एक युवक था। उसके माँ-बाप उसके बचपन में ही गुज़र चुके थे। उसकी दादी ने ही उसे पाला-पोसा और बड़ा किया।

कुछ सालों के बाद दादी सख्त बीमार पड़ गयी और बहुत दिनों तक पलंग पर ही पड़ी रही। मरते-मरते उसने दो चित्र उसे दिये और कहा, ''देखो सत्यकीर्ति, ये दो देवियों के चित्र हैं। श्रद्धापूर्वक इनकी पूजा करोगे तो तुम्हारा शुभ होगा।''

दादी के मर जाने के बाद वह कहीं और रहने के लिए निकल पड़ा। वह एक जंगल से होता हुआ जाने लगा। वहाँ उसे एक घर दिखायी पड़ा। उस घर में एक औरत रह रही थी। उसने उससे कहा, ''मुझे ऐसा आश्रय चाहिये, जहाँ भूखा रहना न पड़े। वहीं इन दोनों चित्रों की पूजा करता रहूँगा।''

वह औरत हँस पड़ी और बोली, ''यहाँ से पूरब की दिशा में चले जाओ। वहाँ तुम्हें एक टीला दिखायी पड़ेगा। वहाँ तरह-तरह के फलों के वृक्ष हैं। वहाँ एक उजड़ा घर भी है। वहीं अपने चित्रों की पूजा कर सकते हो।''

सत्यकीर्ति टीले पर पहुँचा। उस औरत के कहे मुताबिक वहाँ एक उजड़ा घर भी था। उस टीले के चारों ओर तरह-तरह के फलों के वृक्ष थे। फल खाकर अपना पेट भरते हुए वह उस घर में रहने लगा और दादी के दिये चित्रों की श्रद्धापूर्वक पूजा करने लगा।

कुछ समय के बाद एक देवी प्रत्यक्ष हुई। उसने सत्यकीर्ति से कहा, ''मैं तुम्हारी पूजा से बहुत संतुष्ट हूँ। बोलो, तुम्हें क्या वर चाहिये?''

''माते, तुम कौन-सी देवी हो?'' सत्यकीर्ति ने पूछा।

''मैं स्वार्थ की देवी हूँ। तुम जो वर माँगोगे,

२५ साल पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

उसमें स्वार्थ अवश्य होना चाहिए। इस सत्य को दृष्टि में रखकर ही वर माँगो।'' उस देवी ने कहा।

''मैंने सोचा तक नहीं था कि इतनी जल्दी तुम प्रत्यक्ष हो जाओगी। कृपया कल फिर से दर्शन देना और जो वर माँगूंगा, देना।'' सत्यकीर्ति ने कहा।

स्वार्थ-देवी 'हाँ' कहकर अदृश्य हो गयी।

सत्यकीर्ति की समझ में नहीं आया कि यह स्वार्थ किस चिड़िया का नाम होता है। वह तुरंत वहाँ से निकला और जंगल में रह रही औरत के पास गया। उसने स्वार्थ-देवी की बात उससे बतायी और पूछा, ''यह स्वार्थ होता क्या है?''

''पहले घर के अंदर आना।'' कहती हुई वह सत्यकीर्ति को घर के अंदर ले गयी और उसे खाना दिखलाया। फिर इसके बाद एक कन्या को उसके सामने ले आयी और पूछा, ''यह कन्या कैसी लगती है?''

''अद्भुत,'' सत्यकीर्ति ने कहा। उसने अब तक ऐसी सुंदर स्त्री को देखा नहीं था।

''बेटे, यह मेरी बेटी है। सुंदर अवश्य है, पर जन्म से गूँगी है। स्वार्थ-देवी से वर माँगकर इसका गूँगापन मिटा दो तो मैं इसकी शादी तुमसे करूँगी।'' उस औरत ने कहा।

सत्यकीर्ति फिर टीले पर लौट आया। दूसरे दिन जब वह पूजा में मग्न था, तब स्वार्थ-देवी प्रत्यक्ष हुई। उसने देवी से कहा, ''मैं एक कन्या से विवाह करना चाहता हूँ। वह गूँगी है। ऐसा वर दो, जिससे वह बोल पाये।''

स्वार्थ-देवी ने उसकी माँग की पूर्ति की और अंतर्धान हो गयी। सत्यकीर्ति फिर से उस औरत के पास गया। वहाँ पहुँचने पर उसने देखा कि अब वह गूँगी नहीं है।

''तुमने तो वचन दिया था कि अपनी बेटी से मेरी शादी कराओगी। कराओ न।'' सत्यकीर्ति ने ज़ोर देकर कहा।

''सत्यकीर्ति, तुम बहुत नादान हो। अब मेरी बेटी गूँगी नहीं रही, इसलिए इस सुंदरी की शादी किसी महाराज से कराऊँगी। कोई भी महाराज इसकी सुंदरता पर लट्टू होकर इससे शादी करने का तैयार हो जायेगा।'' उस औरत ने कहा।

सत्यकीर्ति ने दर्द भरे स्वर में कहा, ''तुम्हें यह क्या उचित लगता है?'' ''हाँ, सौ फी सदी उचित है। तुमने मुझसे पूछा था न कि स्वार्थ

होता क्या है। इसी को स्वार्थ कहते हैं। अपनी बेटी की शादी तुमसे न करके किसी महाराज से करना ही स्वार्थ कहलाता है।'' औरत ने व्यंग्य भरे स्वर में कहा।

सत्यकीर्ति को स्वार्थ अच्छा नहीं लगा। वह अपनी जगह पर लौट आया और दूसरी दवी की पूजा में लग गया। कितने ही सालों तक लगातार पूजा करने के बाद भी वह देवी प्रत्यक्ष नहीं हुई। उसकी दाढ़ी और मूँछें बढ़ती गयीं। बहुत सालों के बाद दूसरी देवी प्रत्यक्ष हुई और उससे वर माँगने के लिए कहा। सत्यकीर्ति ने भक्तिपूर्वक उसे प्रणाम करते हुए पूछा, ''माते, तुम कौन हो?''

''मुझे निस्वार्थ देवी कहते हैं। मेरे वर से तुम्हें लाभ लेना हो तो उसमें कोई स्वार्थ नहीं होना चाहिये।'' देवी ने कहा।

सत्यकीर्ति ने उससे अगले दिन आने को कहा और जंगल में रहनेवाली उसी स्त्री से मिलने गया। अब वह बिल्कुल बूढ़ी थी। दूसरी देवी के प्रत्यक्ष होने की बात उसने कही और पूछा, ''यह निस्वार्थता है क्या?''

बूढ़ी हँस पड़ी और बोली, ''कलिंग देश के राजा ने मेरी पुत्री से विवाह रचाया। उनकी एक पुत्री हुई। उसका नाम वत्सला है। वह अब अठारह साल की युवती है। बड़ी ही सुंदर है। पर वह गूँगी है। निस्वार्थ देवी से वर माँगो, जिसके बल पर वह फिर से बोल सके। उसके ठीक हो जाने के बाद भी मैं उससे तुम्हारा विवाह नहीं कराऊँगी। यह निःस्वार्थ वर होगा।''

सत्यकीर्ति लौटते समय इसी बात को लेकर सोचना रहा। वह भटक गया और थोड़ी देर बाद
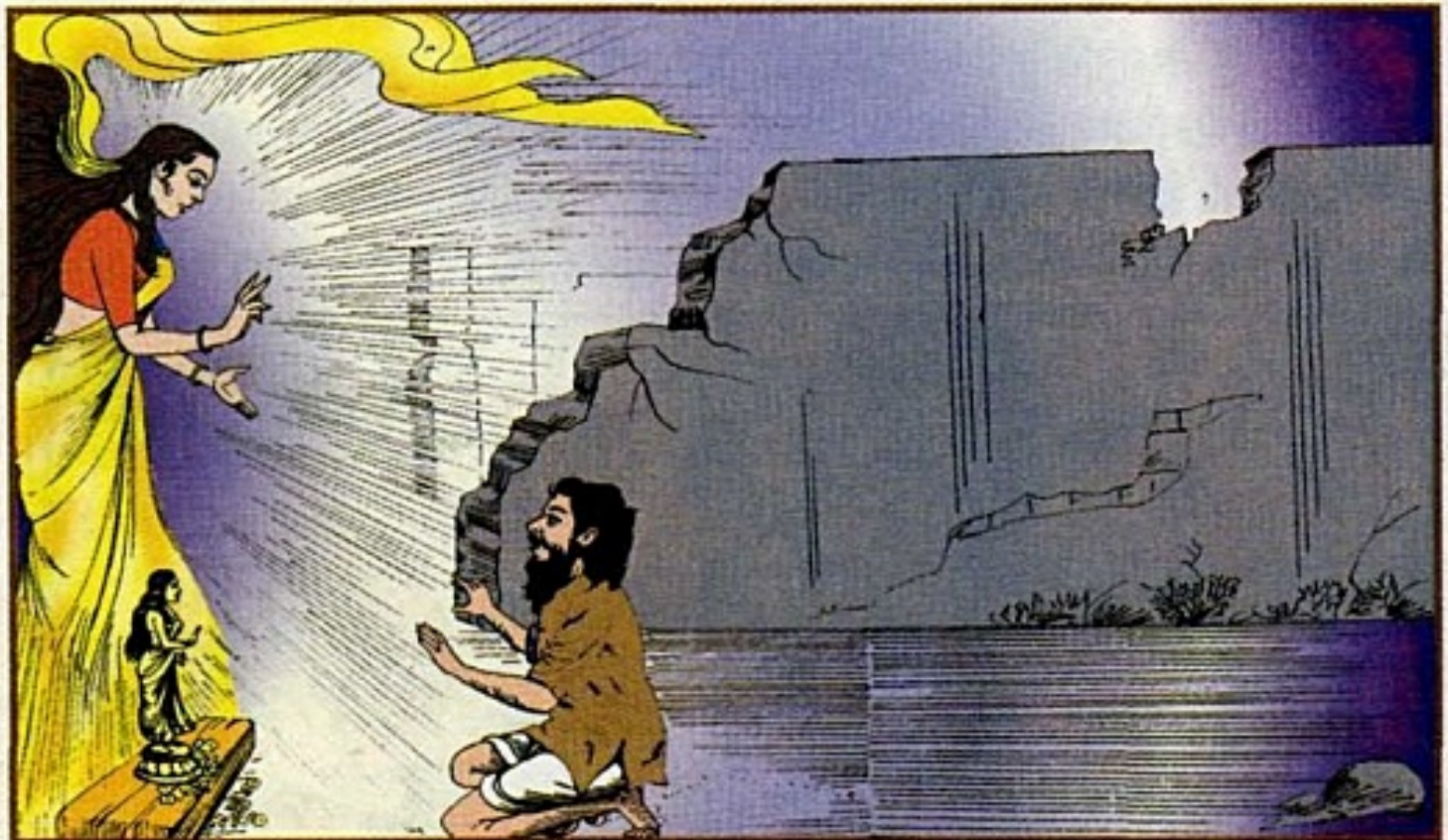
एक मुनि के आश्रम में पहुँचा। मुनि ने उससे सारी बातें सुनने के बाद कहा, ''वत्स, तुमसे बीस साल पहले ही से यहाँ तपस्या करता आ रहा हूँ। परंतु मेरी तपस्या सफल नहीं हुई। इसका क्या कारण हो सकता है, निस्वार्थ देवी से पूछना और मुझे सूचित करना।''

सत्यकीर्ति ने ''हाँ'' कहा और किसी प्रकार टीले पर पहुँच पाया।

अगले दिन निस्वार्थ देवी पुनः प्रत्यक्ष हुई। सत्यकीर्ति ने उससे गूँगी वत्सला को बोलने की शक्ति दिलाने का वर माँगा और तपस्वी की असफलता का कारण भी जानना चाहा।

निस्वार्थ देवी ने कहा, ''वत्सला बहुत ही जल्दी बोल पायेगी। अब रही तपस्वी की बात। उसकी सारी समस्या उसका कमंडल निगल जाता है। उस कमंडल में उसकी जो तपोशक्ति भरी पड़ी है, वह उस मुनि के उपयोग में नहीं आयेगी। उससे किसी दूसरे को ही लाभ पहुँचेगा। उस तपोशक्ति को किसी को देने के बाद ही उस मुनि की तपस्या सफल हो सकती है।'' यों कहकर वह अदृश्य हो गयी।

सत्यकीर्ति मुनि से मिला और देवी की कही बातें बतायीं। मुनि ने वह कमंडल उसी को दे दिया। उसे पकड़ते ही उसमें निहित तपोशक्ति से सत्यकीर्ति युवक हो गया। वह सीधे उस बूढ़ी के पास गया और कहा, ''दादी, देवी ने कहा है कि तुम्हारी पोती जैसे ही अपने होनेवाले पति को देखेगी, वह बोलेगी।''

''अच्छा हुआ, तुम आ गये। मेरी पोती कल ही यहाँ आयी है। ठहरो, मैं उसे यहाँ ले आती हूँ।'' कहती हुई वह अंदर गई। इतने में उसकी पोती राजकुमारी घर से बाहर आयी और सत्यकीर्ति को देखते ही पूछ बैठी, ''दादी, ये कौन हैं?''

पोती को बोलती हुई देखकर बूढ़ी थोड़ी देर तक स्तंभित रह गयी। फिर बोली, ''तुम बोल रही हो ! इसका मतलब है कि यही तुम्हारा होनेवाला पति है।''

सत्यकीर्ति और राजकुमारी वत्सला का विवाह धूमधाम से हुआ। पहले वह कलिंग राजा का दामाद बना, बाद में उस देश का राजा।

# बेवकूफ़

धनिया एक मामूली किसान था। इधर कुछ सालों से समय उसका साथ नहीं दे रहा था। फसल कटने ही वाली थी कि ज़ोर की बारिश हुई और सब कुछ बरबाद हो गया। आम के पेड़ों में मंजरियाँ लगीं भी नहीं कि इतने में कोहरा छा गया और देखते-देखते सब बेकार हो गया। बेटी की शादी तय हो गयी, पर किसी कारण से भी मानों नहीं हो पायी।

धनिया का बेटा रतन अपने को बहुत अक़्लमंद मानता था। जब उसने देखा कि सब कुछ विपरीत हो रहा है, तो वह ज्योतिषी मार्तण्ड शिवशर्मा से मिला। उन्होंने हिसाब लगाने के बाद रतन से कहा, ''एक क्षुद्र देवता तुम्हारे घर पर हावी है। एक हफ़्ते भर पूजा करो और उसके बाद एक बेवकूफ़ को भरपेट खिलाओ।''

''बेवकूफ़ को? आपकी सलाह तो मुझे बड़ी विचित्र लगती है,'' रतन ने कहा।

''इसमें कोई विचित्रता नहीं है। तुम्हारे घर में सबके सब अक़्लमंद हैं। अक़्लमंदों को सताने में उस क्षुद्र देवता को बड़ा मज़ा आता है। बेवकूफ़ से वह कोसों दूर रहता है। तुम लोगों की पूजा से प्रसन्न हो जाने के बाद, वह तुम्हारा घर छोड़कर चला जायेगा और बाद किसी दूसरे अक़्लमंद के घर में घुस जायेगा। इसलिए किसी बेवकूफ़ को दिखा देना तो बस, वह तुम्हारा घर छोड़कर चलता बनेगा।'' शिवशर्मा ने कहा।

रतन ने ये बातें माँ-बाप से कहीं।

''बेवकूफ़ कहाँ मिलेगा?'' धनिया ने पूछा।

तब रतन को वीरभद्र की याद आयी। वीरभद्र, सूरदास का बेटा है। मालूम हुआ है कि इधर कुछ सालों से उनकी भी हालत ठीक नहीं है। समय उनका भी साथ नहीं दे रहा है। बहुत से लोगों का मानना है कि वीरभद्र ही इसका कारण है। वीरभद्र अपने को बड़ा सयाना मानता है। पर वह एकदम बेवकूफ़ है। अगर कोई उसे बेवकूफ़ कहे तो वह नाराज़ हो उठता है। इसलिए,

- अशोक राणा -

लोग जान-बूझकर उसे अक़्लमंद कहते हैं और उसकी तारीफ़ के पुल बाँधते हैं। इसपर उसे बेहद खुशी होती है।

रतन ने, धनिया से बीरभद्र के बारे में कहा। "मानता हूँ कि वह बेवकूफ़ है, पर हम यह कहकर उसे कैसे बुला सकते हैं कि तुम बेवकूफ़ हो, इसलिए हमारे घर खाने आना।" धनिया ने प्रश्न किया।

"पिताजी, उससे हम थोड़े ही कहेंगे कि तुम बेवकूफ़ हो। उसे हम इंद्र, चंद्र कहेंगे। हमारी प्रशंसा भरी बातें सुनकर वह खुशी से फूल उठेगा। मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि उसे कैसे वश में करना है। यह काम मुझपर छोड़ दीजिये।"

धनिया ने 'हाँ' कह दिया। रतन बीरभद्र से जा मिला और इधर-उधर की बातों के बाद कहा, "तुम्हारा गला कितना मधुर है। क्या संगीत साधना कर रहे हो?"

"हाँ, कर रहा हूँ। कविता भी करता हूँ।" फिर उसने स्वरचित एक कविता सुनायी।

"वाह, वाह। कितनी अच्छी कविता है। इतनी विद्याओं में पारंगत होना बड़े ही भाग्य की बात है। भगवान तुम्हें थोड़ा-बहुत और सुंदर बनाते तो कितना अच्छा होता।" रतन ने कहा।

"पर लोग तो कहते रहते हैं कि मैं बहुत सुंदर हूँ," वीरभद्र थोड़ा चिढ़ते हुए कहा।

"देखो, मैं झूठ नहीं बोलता। जो है, वही कहता हूँ। तुम्हारी कविता अच्छी है, तारीफ़ की। तुम्हारा कंठस्वर मीठा है, मान लिया। जान भी गया हूँ कि तुम बड़े अक़्लमंद हो। बस, थोड़ी-बहुत कमी है तो वह तुम्हारी सुंदरता में है। यह सचाई मैंने तुमसे छिपायी भी नहीं। जो मेरे मन को लगा, मैंने साफ़-साफ़ कह भी दिया। इसका यह मतलब नहीं कि तुम बदसूरत हो। लोग तुम्हारी तारीफ़ इसलिए करते हैं, क्योंकि असलियत व वास्तविकता को तुम मानते हो।" रतन ने यों उसकी तारीफ़ की और उसे सातवें आसमान पर बिठा दिया।

वीरभद्र बहुत खुश हुआ। इसके बाद, फलाने दिन उसके यहाँ भोजन करने आने के लिए उसे न्योता दिया। वीरभद्र ने मान लिया।

धनिया के घर में शिवशर्मा ने यथोचित पूजा करवायी। पूजा के समाप्त होते ही वीरभद्र को पेट भर स्वादिष्ट खाना खिलाया गया। धनिया की स्थिति बहुत सुधरी। दूर के रिश्तेदार ने मरते-मरते अपनी संपत्ति उसके नाम कर दी। दूसरी फसल से अत्यधिक आमदनी हुई। बेटी का विवाह एक संपन्न परिवार में हुआ।

एक दिन उसके दूर का रिश्तेदार मुकुंद उनके घर आया। उसने रतन की अक़्लमंदी की तारीफ़ करते हुए कहा, ''अगले शुक्ल पक्ष में तुम्हें हमारे घर में खाने के लिए आना होगा।''

रतन ने घबराते हुए कहा, ''तुम्हारा न्योता तो विचित्र लगता है। कहीं तुम किसी क्षुद्र देवता की पूजा तो करा नहीं रहे हो?''

''हाँ, तुमने ठीक कहा। पर, यह तुम कैसे जानते हो?'' मुकुंद ने पूछा।

तब रतन ने सविस्तार मुकुंद को सब कुछ बताया और कहा, ''उस पूजा के बाद किसी बेवकूफ़ को खाना खिलाना है? मुझ जैसे अक़्लमंद को नहीं। सूरदास के बेटे को भोजन पर बुलानेके बाद हमारी स्थिति में आकाश-पाताल का अंतर आ गया, कायापलट हो गया। तद्वारा यह सत्य भी साबित हो गया कि वीरभद्र महा मूर्ख है। इसलिए उसी को तुम भोजन करने बुलाना। तुम्हारी पूजा के लिए वही सही और योग्य व्यक्ति है।''

''ऐसा ही सोचकर मैं उसे न्योता देने गया। तुरंत उसने जान लिया कि मैं क्षुद्र देवता की पूजा कराने जा रहा हूँ। कल्पना कर सकते हो, उसने उस समय क्या कहा? उसने स्पष्ट शब्दों में कहा, ''ये सब अंधविश्वास है। महज़ बेवकूफ़ी है। बिना पूजाओं के ही हमारे घर की स्थिति एकदम बदल गयी। सब प्रकार से हम अब सुखी तथा प्रसन्न हैं। वह तुम्हारी बेइज़्ज़ती करना चाहता नहीं होगा, इसलिए उसने तुम्हारे बारे में कुछ भी नहीं बताया।'' मुकुंद ने कहा।

''तो फिर तुम मेरे पास क्यों आये? क्या तुम समझते हो कि मैं बेवकूफ़ हूँ?'' रतन ने चिढ़ते हुए पूछा।

''तुम यह क्या कह बैठे? तुम्हारे बारे में आख़िर मैं जानता भी क्या हूँ। भला मैं तुम्हें क्यों बेवकूफ़ कहूँगा। तुम्हें खाने पर बुलाने के लिए हमारे गाँव के ज्योतिषी मार्तण्ड शिवशर्मा ने सलाह दी। उन्हीं के कहे अनुसार मैंने तुम्हें न्योता दिया।'' मुकुंद ने सफाई में कहा।

उसे क्षुद्र देवता की पूजा कराने की सलाह देनेवाले शिवशर्मा, उसके बारे में क्या धारणा रखते हैं, अब स्पष्ट हो गया। अब रतन का सिर शर्म के मारे झुक गया। वह आँखें फाड़-फाड़कर ज़मीन को ही देखता रह गया।
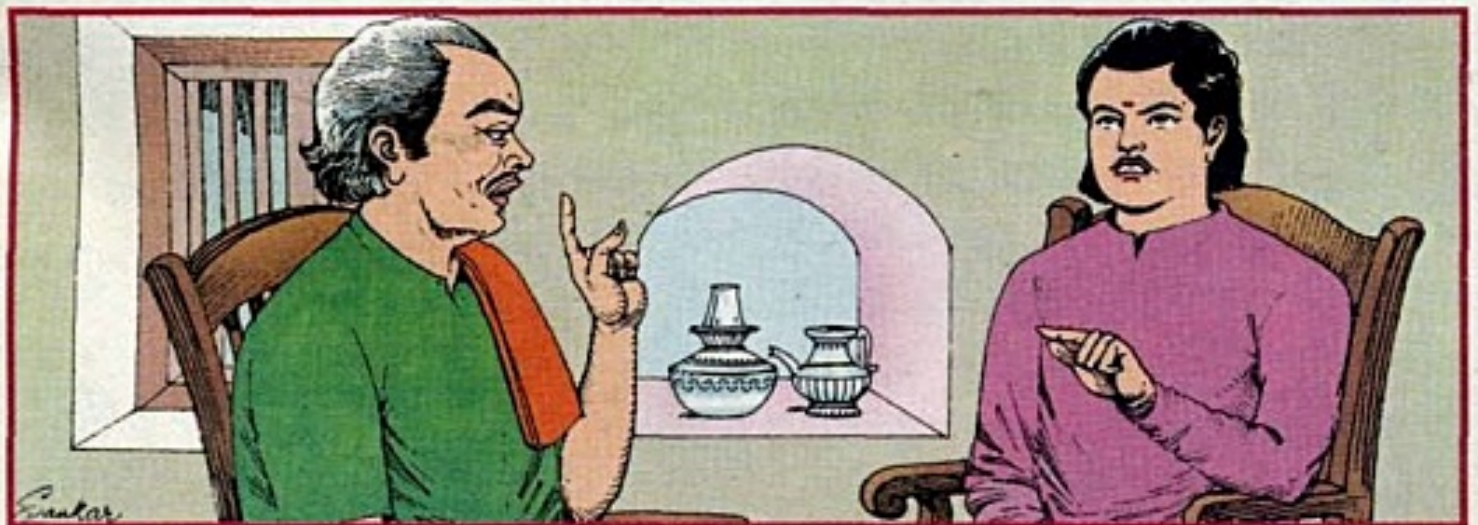
## फिलीपिन्स का एक आख्यान

# यह संसार कैसे बना?

हजारों साल पहले न जमीन थी, न सूरज-चाँद और न तारे थे। और संसार केवल समुद्र-सा जल का विस्तार था, जिसके ऊपर आसमान फैला था।

भगवान मगुआयन समुद्र का राजा था और भगवान कप्तान आसमान पर राज्य करता था। मगुआयन की एक बेटी थी, जिसका नाम था लिडागत, जलनिधि तथा कप्तान का एक बेटा था - लिहांगिन यानी पवन।

''लिडागत को क्यों न हम अपनी बहू बना लें?'' भगवान कप्तान ने लिहांगिन को सलाह दी। भगवान मगुआयन ने इस विचार का स्वागत किया। दोनों देवता अपने बच्चों की शादी के लिए राज़ी हो गये। इस तरह जलनिधि पवन की दुलहन बन गई।

उनके तीन पुत्र और एक पुत्री पैदा हुई। पुत्रों के नाम थे - लिकालिबूतन, लियादलाओ तथा लिबुलन। पुत्री का नाम था - लिसुगा।

लिकालिबूतन का शरीर चट्टान का बना था और वह बहुत बलवान और बहादुर था। लियादलाओ सोने का बना था और वह हमेशा खुश रहता था; लिबूलन ताम्बे से बना था और वह कमजोर तथा बलहीन था; खूबसूरत लिसुगा का शरीर शुद्ध चाँदी से निर्मित था और वह बहुत मधुर तथा भद्र थी। उनके माता-पिता उन्हें बहुत चाहते थे। वे बहुत प्रसन्न थे और अपने जीवन से सन्तुष्ट थे।

कुछ दिनों के बाद लिहांगिन की मृत्यु हो गई। इसके बाद हवाओं पर उसका बड़ा बेटा लिकालिबूतन शासन करने लगा। लिडागत की भी मृत्यु हो गई।

कुछ समय के बाद लिकालिबूतन को हवाओं पर अपनी शक्ति के कारण घमण्ड हो गया और उसने अधिक शक्ति प्राप्त करने का निश्चय किया। ''हवाओं पर मेरा राज्य है। लेकिन यह काफी नहीं है। मुझे ज्यादा शक्ति की जरूरत है। मैं कप्तान पर आक्रमण करूँगा और आसमान पर भी राज्य करूँगा।'' लिकालिबूतन ने सोचा।

उसने अपने भाइयों को इस आक्रमण में साथ देने के लिए कहा। पहले तो दोनों ने मना कर दिया पर बाद में उसकी योजना में शामिल हो गये। तीनों ने मिलकर आसमान पर आक्रमण कर दिया।

लिकालिबूतन ने सबसे मजबूत तूफानों और आँधियों को आसमान में

इस्पात के फाटकों को तोड़ने के लिए भेजा। दरवाजों के तहस-नहस होते ही सभी भाई आसमान के अन्दर घुस गये। लेकिन तभी क्रोध से आँखें लाल पीली किये भगवान कप्तान आ पहुँचा। कप्तान ने उन पर तीन वज्र भेजे।

पहले वज्र ने ताम्बे के बने लिबुलन को पिघलाकर गेंद बना दिया। दूसरे वज्र के प्रहार से सोने का लियादलाओ भी पिघल गया। तीसरे वज्र से लिकालिबूतन का चट्टानी शरीर टुकड़ों में बिखर कर समुद्र में गिर गया। उसका शरीर इतना विशाल था कि उसका हर टुकड़ा पानी के स्तर से ऊपर उठ गया और वही स्थल या पृथ्वी की जमीन बन गया।

इसी बीच भद्र लिसुगा अपने भाइयों को ढूँढ़ती आसमान की तरफ गई। क्रोध से पागल कप्तान ने उस पर भी एक-वज्र फेंका। उसका रूपहला शरीर हजारों टुकड़ों में बिखर गया।

कप्तान तब आसमान से उतरकर नीचे आया और समुद्र को चीरता हुआ उसने मगुआयन को बाहर बुलाया। उसने उस पर आसमान पर आक्रमण करने का आरोप लगाया। मगुआयन ने कहा कि आक्रमण के बारे में उसे कुछ मालूम नहीं है क्योंकि वह समुद्र की अतल गहराई में सो रहा था। उसने किसी तरह कप्तान का क्रोध शांत किया। फिर दोनों अपने पोतों के मर जाने के कारण बहुत दुखी हो गये, खास कर प्यारी और सुन्दर लिसुगा के खो जाने का उन्हें बड़ा ग़म हुआ। वे अपनी पूरी शक्ति लगाकर भी उन्हें पुनर्जीवित नहीं कर सकते थे। फिर भी, उन्होंने हरेक शरीर को एक सुन्दर प्रकाश प्रदान किया जो सदा चमकता रहेगा।

तो इस तरह सुनहला लियादलाओ सूरज बन गया और ताम्बे का लिबुलन चाँद बन गया। चाँदी की लिसुगा के हजारों टुकड़े आसमान के तारे बनकर चमकने लगे। दुष्ट लिकालिबूतन को देवताओं ने कोई प्रकाश नहीं दिया लेकिन उसके शरीर को मनुष्य की नई जाति का आधार बनाने का निश्चय किया। इसलिए कप्तान ने मगुआयन को एक बीज दिया जो उन्होंने उस जमीन में बो दिया जो, तुम्हें याद होगा, लिकालिबूतन के विशाल शरीर का हिस्सा था।

शीघ्र ही बीज से बाँस का एक पेड़ उग आया। उसकी एक शाखा के खोखले से एक स्त्री और एक पुरुष निकले। पुरुष का नाम था सिकालक और स्त्री का नाम सिकाबे था। ये मानव जाति के पूर्वज थे। इस तरह सूरज, चाँद और तारों के साथ पृथ्वी पर मानव जाति का जीवन शुरू हुआ।

*- विद्या द्वारा पुनर्कथित*

राजा शान्तिदेव को सेनापति वीर सिंह द्वारा रचित षड्यंत्र के बारे में मालूम होता है। वह अपनी रानी को महल से भाग जाने के लिए कहता है। जैसे ही वे बच निकलते हैं कि राजा पर आक्रमण हो जाता है...
आर्य
अज्ञात राजकुमार का रहस्य
2
चित्र : गाँधी अय्या
जी अच्छा स्वामी !
मेरी प्रतीक्षा मत करना। गुप्त मार्ग तुम्हें और हम लोगों के बेटे को सुरक्षित स्थान पर ले जायेगा।
राजा अपने कक्ष में लौट आता है।
वह अपने दरवाजे पर किसी के द्वारा उत्तेजित होकर दस्तक देने की आवाज़ सुनता है।
कौन हो सकता है?
राजा दरवाजे के गुप्त छिद्र से झाँक कर देखता है।
वीर सिंह के आदमी !
कई आदमी एक मजबूत शहतीर से दरवाजे पर प्रहार करते हैं।
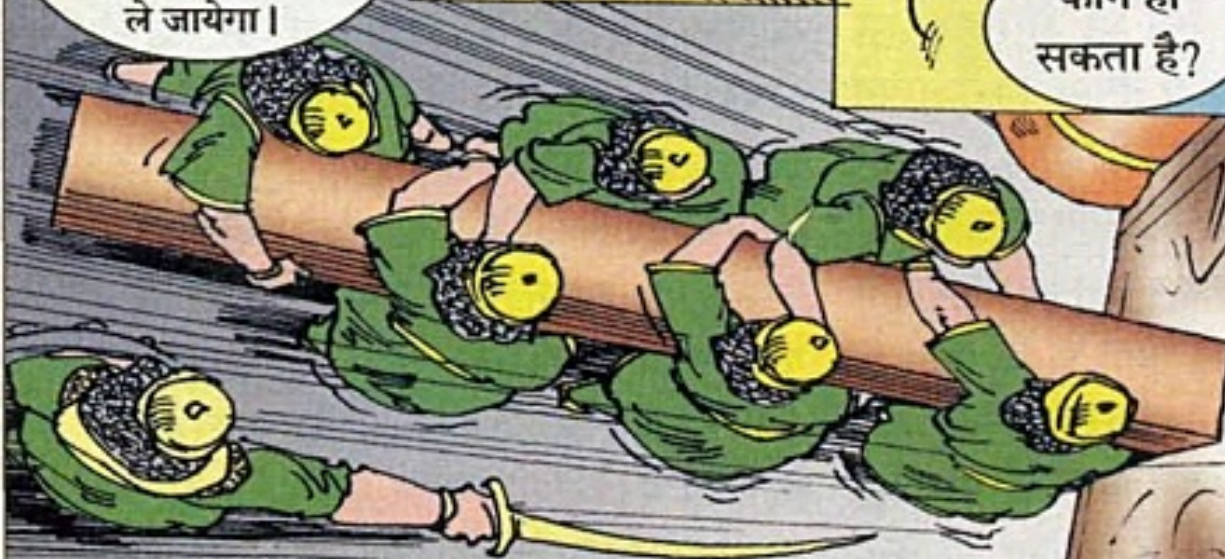
राजा दरवाजे को झटके से खोलता है।
घुसपैठिये एक दूसरे पर गिर जाते हैं।
राजा अपनी तलवार चलाता है...
...जिससे कुछ लोग मारे जाते हैं।

राजकुमार का जन्मदिन समारोह पू
धूमधाम पर है। आम लोगों की भारी भी
है। वे महल के अन्दर की घटनाओं स
अनभिज्ञ हैं।
वीर सिंह !
राजा बच निकलता है...
...और सीढ़ी पर गुण्डों का सामना करता है।

राजा ने उनकी उसे घेर लेने की योजना को विफल कर दिया।

वह वीर सिंह का सामना करता है, इस मुठभेड़ में वीर सिंह का कान कट जाता है।

राजा किसी प्रकार छत पर पहुँच जाता है।
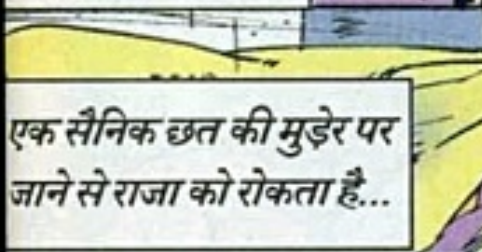
एक सैनिक छत की मुड़ेर पर जाने से राजा को रोकता है...
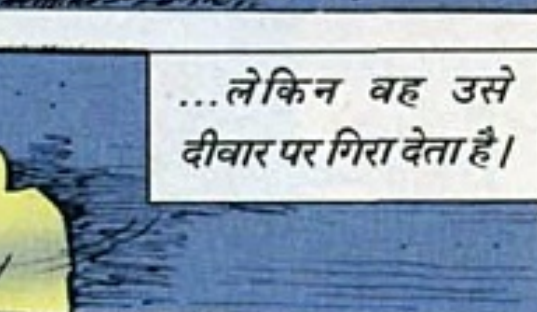
...लेकिन वह उसे दीवार पर गिरा देता है।

राजा देखता है कि लोग मुड़ेर पर चढ़ने की कोशिश कर रहे हैं।

क्रमशः

हे, इन चित्रों में आठ अन्तर हैं
उन्हें खोजो और मजे लो।

1

2

ठीक–ठीक
भरो रंग
चभ–चम
चमके रंग

3
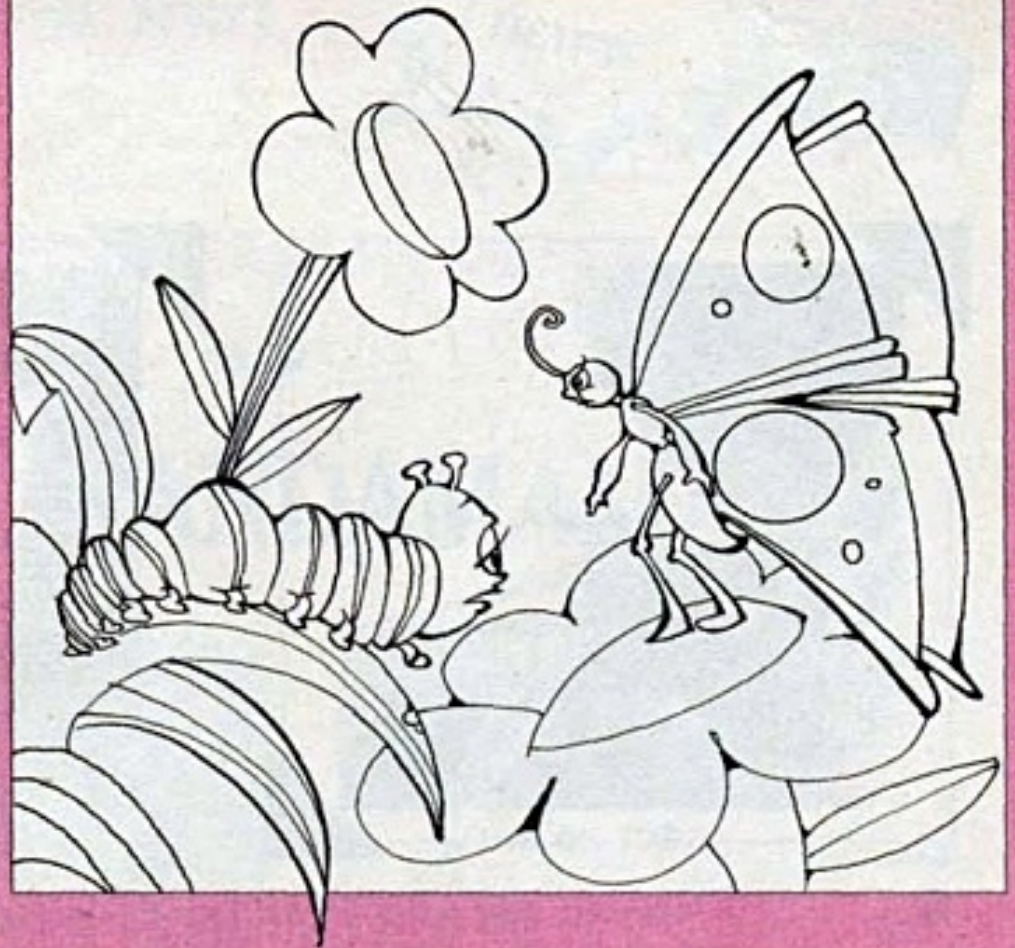
हे मगरमच्छ, हो
क्यों मौन?
तुम सब में, बता,
सबसे लम्बू कौन?

(उत्तर - पृष्ठ ६६ पर)
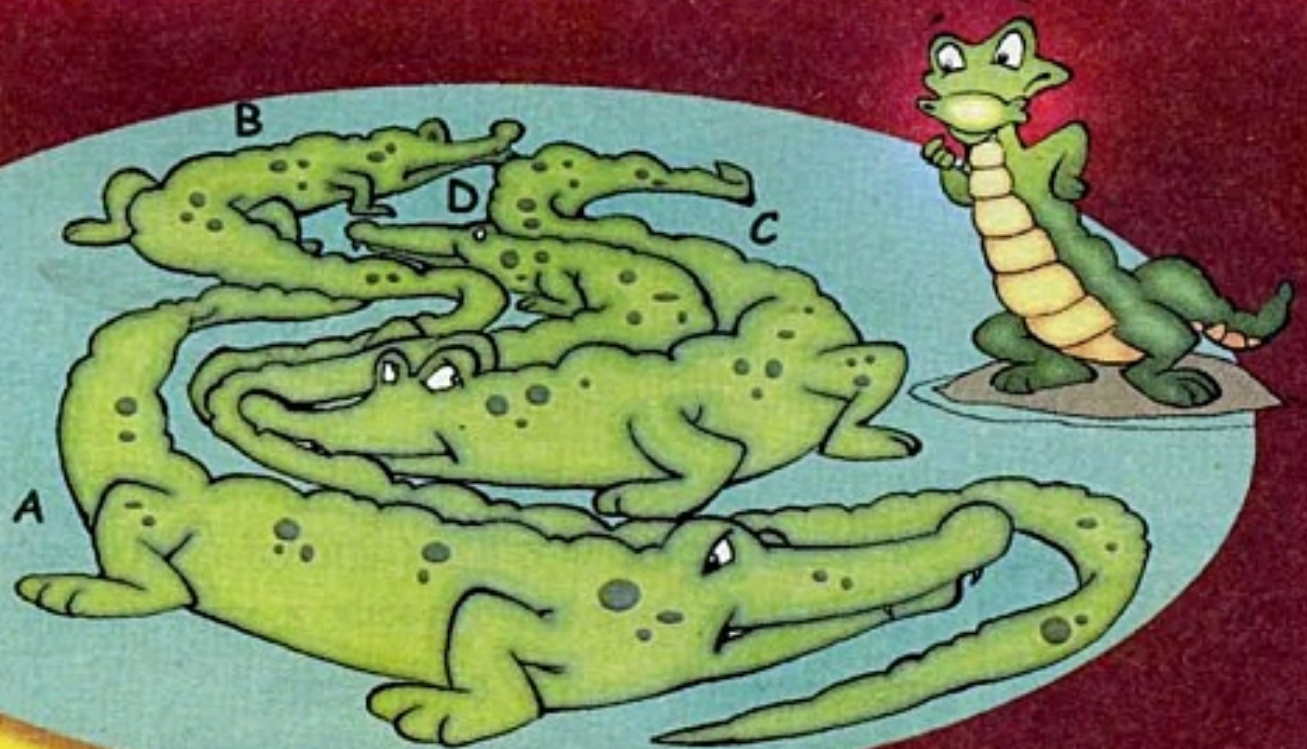
# चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

Soura

Soura

**क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?**

*चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,*
प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०० ०९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए । सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/-रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा ।

## बधाइयाँ

जून अंक के पुरस्कार विजेता हैं :
अम्बर आचार्य
०४, वनिता सदन, प्रथम मंजिल
पड़वल नगर, वागले स्टेट रोड नं.८
थाने (पश्चिम) - ४०० ६०४, महाराष्ट्र

विजयी प्रविष्टि

मेरे लिए तो कर्म ही पूजा ।
खेल छोड़ कोई काम न दूजा ।।

**मनोरंजन टाइम्स के उत्तर (पृष्ठ-६४-६५)**

१. १. लोमड़ी की पूँछ के निकट कंकड़, २. पॉकेट, ३. लोमड़ी की पूँछ, ४. टिड्डा की कमीज, ५. दायीं तरफ की पत्तियाँ, ६. पेड़ की धड़ पर रेखाएँ, ७. लोमड़ी और टिड्डा के बीच के कंकड़, ८. बायीं तरफ का पत्ता।

२. पाँच मगरमच्छ हैं और (D) डी सबसे लम्बा है।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 600 026 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor : Viswam